भूमिका

तुकडोजी के जन्म की तिथि 30 अप्रैल 1909 और उनकी मृत्यु 1968 में हुई। तुकडोजी ने अपने जीवन में जितने भी कार्य किए और उनका जीवन दर्शन समाज के लिए बहुत उपयोगी रहे है एवं उनका स्वतंत्रता संग्राम में भी बहुत बडा योगदान रहा है । तुकडोजी की छवि एक जनजागृति करने वाले संत की तरह थी।

तुकडोजी का संपूर्ण जीवन समाज जागृति के कार्य में अर्पन था । इसमें उनका ग्राम विकास का विचार और आदर्श जीवन की संकल्पना और सामाजिक परिवर्तन यह उनकी जन-जागरण का उद्देश्य था।

इस लघु शोध-प्रबंध में उनके सभी दृष्टिकोणों का अध्ययन किया गया है । उनके जीवन और सामाजिक दर्शन संबंधी सामग्री तुकडोजी के आधार और सहायक ग्रंथों से ली गई है और कुछ ग्राम ग्रामगीता प्रचारकों से भी मदद ली गई है । इस शोध-प्रबंध में पांच अध्याय में विभक्त किया गया है। पहला अध्याय तुकडोजी का जीवन और उनके कार्य का संक्षिप्त विश्लेषन किया गया है । दूसरे अध्याय में तुकडोजी का राजनीतिक और सामाजिक योगदान दर्शाया गया है । इसमें तुकडोजी की स्वतंत्रता संग्राम में क्या भूमिका थी और स्वतंत्र मिलने के बाद उन्होंने कौन से सामाजिक कार्य कीये, इसका संक्षिप्त विश्लेषन किया गया है। तीसरे अध्याय में तुकडोजी का ग्राम निर्माण पर क्या दृष्टिकोण है और ग्राम विकास के लिए चुनौतियाँ और उसका समाधान क्या है । इन विचारों का संक्षिप्त विश्लेषन तीसरे अध्याय में किया गया है। चतुर्थ अध्याय में सामाजिक परिवर्तन की दिशा कीस तरह से हो उसमें तुकडोजी के विचारों से सामाजिक परिवर्तन कीस तरह से हो और समाज का आर्थिक सामाजिक और समाज का आर्थिक, सामाजिक और शैक्षणिक स्थिति भविष्य में कैसी हो इसका विश्लेशन किया गया है । पांचवा अध्याय तुकडोजी के विचारों से आदर्श जीवन की संकल्पना कीस तरह से है ओर वर्तमान में इन्सान सामान्य जीवन आदर्श रूप में किस तरह से जिए इसका संक्षिप्त विश्लेशन पांचवे

अध्याय में किया गया है। अध्याय के अंत में उपसंहार दिया गया है। उसमें संपूर्ण पाँचों अध्यायों का निष्कर्ष तथा शोधार्थी का अपना विचार संक्षिप्त रूप में दिया गया है।

शोध प्रविधी

प्रस्तुत शोध में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनो स्त्रोंतो का प्रयोग किया जायेगा। मराठी तथा हिन्दी अनुवादित पुस्तको का अध्ययन करूंगा तथा शोध की प्रामाणिकता बढ़ाने के लिए पत्रिका, केन्द्रीय पुस्तकालय म. गां. अं. हि. वि., गुरूकुंज पुस्तकालय मौजरी, तथा इन्टरनेट की मदद से गुणात्मक आधार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन किया।

शोध की प्रासंगिकता

इस शोध कार्य राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज के समाज दर्शन तथा सामाजिक आन्दोलन का गहन अध्ययन करके शोध की प्रासंगिकता को बढ़ाने का प्रयास किया गया। वर्तमान समय में संत तुकडोजी महाराज के विचारों से समाज एक नयी दिशा और अग्रसरित हो रहा है। अंत इस तरह के शोध कार्य भविष्य में प्रासंगिक में आने वाले शोधार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

शोध समस्या

संत तुकडोजी महाराज के समाज दर्शन संबंधी कोई शोध कार्य अभी तक दृष्टिगोचर नहीं होता। अतः यह प्रस्तावित शोध कार्य में इस कमी को पूर्ण करने का प्रयास किया गया हैं।

शोध उद्देश्य

1) राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज के सामाजिक आन्दोलनों को स्पष्ट करता है।

2) द्वारा पर्यावरणीय चेतना के प्रति जो विचार दिये उन्हें स्पष्ट करना है।

3) जातिय व्यवस्था के प्रति उनके सकारात्मक दृष्टिकोण को स्पष्ट करना है।

शोध की परिकल्पना

1) ग्राम विकास समस्या तुकडोजी महाराज के समय विद्यमान थी।

2) पर्यावरण के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण तात्कालीन समय में भी विद्यमान रही।

3) दलित और आदिवासी जातियों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण तात्कालीन परिस्थितीयों में विद्यमान रही।

अध्याय 1

तुकडोजी का संक्षिप्त जीवन कार्य परिचय

तुकडोजी का बचपन का नाम है, माणिक । उनके पिताजी का नाम है-बंडोजी इंगळे और माता जी का है, मंजुळा। तुकडोजी महाराज का जन्म 30 अप्रैल,1909 को अमरावती जिले में स्थित श्री क्षेत्र यावली ग्राम में हुआ। उनका नाम माणिक होने के बावजुद पहले से ही वे उन्हे तुकड्या कहकर पुकारा जाता था। जन्मतः ही उनमें आध्यामिक शक्ति वास करती थी । नामकरन से ही उन्हें अनेक संत-महात्माओं के आशिर्वाद प्राप्त हो गए थे । घर की आर्थिक परिस्थिति ठीक न होने के कारण माणिक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडा। प्रधानाचार्य ने उसे स्कूल की सफाई, पोताई, पानी भरने तथा मेंज-कुर्सियाँ पोंछने का काम दिया। ऐसे काम करके माणिक शिक्षा ले रहा था, परंतु उसका ध्यान मात्र भक्ति में ही था।[1]

वरखेड के सिद्ध पुरुष समर्थ आडकोजी महाराज कों उन्होंने अपना गुरू बनाया। कुछ ही सालों में तुकडोजी के गुरू आडकोजी समाधिस्थ हो गए। सन् 1925 ई.में माणिक अपनी तपोसाधना के लिए देशोच्चाटन की ओर निकल पड़े। आरंभ में उन्होंने सालबर्डी के जंगल में कुछ दिन बिताए। इसके बाद श्री क्षेत्र रामटेके के जंगल में, चंद्रपुर जिले के ताडोबा जंगल में, चिमुर स्थित रामधीगी, सात बहनों के पहाड़ में और गोंदोंडा के जंगल में उन्होंने कठोर तपसाधना की। आत्मबल प्राप्त करके उन्होंने समाजसेवा द्वारा जन जागृति एवं आत्मिक उन्नति इस प्रकार की कार्य श्रृंखला आरंभ की। अल्प आयु में ही सामान्य व्यक्ति की बुद्धि से परे ऐसे 'आत्मप्रभाव' और 'आनंदामृत' जैसे आत्मानुभवी ग्रंथों की रचना उन्होंने की। चिमुर के प्रचार दौरे के दरमियान नेरी में उन्हें जहर दिया गया। वह भी उन्होंने बड़ी ख़ुशी से ग्रहण किया। उसी पर आधारित 'अलमस्त पीलाया प्याला' भजन गाया। न भुतो न भविष्यती

[1] बाचुलकर,अशोक.(2014).ग्रामगीता.पृष्ठ.1

इस प्रकार सालबर्डी का महायज्ञ किया। जिसमें हजारों पंगतियाँ उठी, करीबन दस लाख लोगों को भोजनदान किया गया। इस प्रकार महाराज की दैव शक्ति का प्रदर्शन हुआ। [2]

'देश काल परिस्थितिनुसार ऋषिनेता जन्म लेते, परिवर्तन धर्म का करते' इस निसर्ग नियम के अनुसार बीसवीं सदी में पुरी तरह बिखरी हुई तथा अति विषमता के कारण रक्त क्रांति की ओर उन्मुख समाज रचना उन्होंने बदल दी । संतबोध पर आधारित ब्रह्मज्ञान को सक्रिय करा के समानता की ओर ले जाने वाली युग प्रवर्तनकारी समाज रचना निर्माण करने के लिए अदृश्य गुरूदेव शक्ति संत तुकडोजी के नाम-रूप में दृश्य रूप में प्रकट हुई। अपने कार्य का अहसास होने पर उन्होंने गर्जन किया, 'तत्काल हुआ अवतरित गुरूदेव भारती, बन गया जनता का सारथी।'

गंगास्नान के नाम पर पापाचार, ईश्वर एवं धर्म के नाम पर समाज को लुटने वाले पंडित-विद्वान, पंथ-संप्रदाय के अखाड़े यह सब वे देख रहे थे। समाज में उच्च वर्ग के लोग दलित बंधुओं को मंदिर में प्रवेश, कुएं का पानी, मान-सम्मान आदि नहीं दे रहें थे। इसलिए जनजागृती के लिए महाराज ने कठोर कदम उठाए। खंजीरी भजन के माध्यम से हजारों लोगों को एकत्र कर उनको प्रबोधन करने की पद्धति भी अपनाई। कथा-कीर्तन, काले (दही, चिवडा आदि मिलाकर बनाया हुआ प्रसाद), सप्ताह (सात दिन तक चलने वाला यज्ञादि) एवं भजन के माध्यम से हरिजन और उच्चवर्गीय लोगों को एकत्र बिठाना, भेदभाव मिटाना, एक-दूसरे को छुना - इस तरह किसी का भी विरोध न करते हुए उन्होंने नरम दिली से क्रांति की। राष्ट्रसंत को दूशन देने वाले लोंगो की बातों में आकर गांधीजी ने उन्हे सेवाग्राम आश्रम में आमंत्रित किया। फिर उनका कार्य देखकर महात्मा गांधीजी ने उन्हें एक महीना भर सेवाग्राम आश्रम में ठहराया। राष्ट्रसंत के प्रभावी भजन से गांधीजी का प्रातःकालीन मौन भी छुटा। तब महात्मा जी के संग राष्ट्रसंत ने भी वहां शौचालय साफ करने का कार्य किया। [3]

---

[2] कडवे, अमोल (2002),राष्ट्रसंताची जपान मधिल भाशने. पृष्ठ.4

[3] नोरा, पुनसे (2001),भारत साधू समाज, पृष्ठ.7

भजन, सप्ताह, यज्ञयाज्ञ, महोत्सव, व्रत आदि प्रसंगों द्वारा लोगों को एकत्र करके उन्हें बोधामृत पीलाकर समाज का विकास करना उनकी पद्धति थी। महाराज कहा करते थें की 'अच्छा कहीं से भी ले ले। स्वतंत्र दल अथवा पंथ निर्माण करने का मेंरा विचार नहीं है। पहले से ही भरपूर पंथ एवं दल विद्यमान है। उन्हें एकत्रित कैसे लाया जा सकता है, इसी कोशिश में मैं हूँ।' पंढरपुर के चातुर्मास में, 'अन्याय सहन कर मरना नहीं उचित, मरना धर्म की रक्षा करके' भजन गाकर समझा दिया की पंढरपुर के वारकरी (नियमित रूप से पंढरपुर की यात्रा के लिए जानेवाला विठ्ठल भक्त) अन्याय पर मात करने वाले है। महाराज स्वत: सूत कताई करते थे। अनेक युवक-युवतियों के लिए सूत कताई की कक्षाएं भी वे चलाते थे।[4] सन् 1942 के क्रांति आंदोलन में महाराज ने अभूतपूर्व जनजागृति की। चिमुर-रामटेक, चंद्रपुर, वर्धा तथा नागपुर के कई भागों में चातुर्मास में उन्होंने, 'भारत के बलवानों! जंग में आजा आजा रे। उठो जवानों करके बताओ, कहने के दिन गए।; 'हिंद भू के स्वपूतों, संत क्यों बैठे हो ऐसे?', 'आगे चल नौजवान आगे चल, समय नहीं है रूकने का।' आदि भजन गाकर युवकों को आवाहन किया। 'गुलामी अब नहीं होना, हमारे प्रिय भारत में', ऐसा स्पष्ट रूप से उन्होंने भारतीय जनता से कहा। इस समय उनके धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक भजनों का प्रवाह पूर्णतः राष्ट्रीय भजनों में रूपांतरीत हो गया था। इसके लिए उन्होंने विशेषतः राष्ट्रधर्म कक्षाएं शुरू की। 'स्वतंत्रता का बैल भला, पर न हो गुलामी का थोर। अपना मुर्गा ही भला, नहीं चाहिए दुश्मन का मोर।' जैसे भजनों द्वारा उन्होंने जनता में स्वाभिमान जागृत किया। साथ ही यह विचार भी दिया की, 'आत्मा अमर है। बीमार पड़कर मरने से अच्छा है, समाज के लिए कुछ करते हुए मरना।' ।[5] 'ऐ संत महंतों! जाग उठो, क्यों सोए आसन में ही ? सोने का समय नहीं है भाई!!' इस प्रकार साधु-संतों को आवाहन किया। 'चमकने दे खुन वीरों का, खुलने दो कर्ण शूरों के, फोड़ने दो भंडा क्रूरों का, चढ़ाओं प्राणों की बलि रन में, तुम

---

[4] वाघ,रूपराव (2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य, पृष्ठ.4

[5] वेलुरकर, हरीभाऊ (2014),साधु सिंध की लहरे, पृष्ठ.10

हाथ क्यों जोड़ते?' इस प्रकार भजनों के माध्यम से महाराज ब्रिटिशों के विरूद्ध युवको की मानसिकता बनाने का कार्य कर रहे थें। गांधीजी ने 'भारत छोड़ो' का नारा दिया। तब राष्ट्रसंत की प्रेरणा से चंद्रपुर, नागपुर, रामटेक, तथा चिमुर के लोगों ने अहिंसात्मक क्रांति की। तब कइयों को कैद किया गया, कई शहीद हो गए, कइयों को फांसी हो गई। यही है वह चिमुर आष्टी की प्रथम क्रांती। 'अब काहे को धुम मचाते हो' इस भजन पर ब्रिटिशों ने तुकडोजी महाराज को भी चार महीनों की कैद सुनाई। 'कौन कहता है की भारत होवेगा हैवानों का, गुंडों का, पापियों का, काले बाजार शौकियों का, है यह हवा निकल जाएगी, जोश बढ़ेगा सेवा का, शांति दूत फैलेंगे घर-घर, रोम नहीं होगा बांका ।' इस प्रकार गुंड, पापी, शौकीन, काला बाजारियों कों उन्होंने सख्त हिदायत दी । 'चल चल अपने गाँव, मत रहना शहर में, अन्न नहीं तो, मर जाएगा भूखां।' इस प्रकार शहर की तरफ भागने वाले समाज को देहात की ओर मुडने की दृष्टि प्रदान की। [6] महाराज ने विश्वशांति सप्ताह का आयोजन किया। जिसमें उन्होंने 'दुनिया के भेद समाप्त होवे, शांति अखंडित रहे।' भजन गाकर विश्व की सुख-शांति के लिए प्रार्थना की। ईश्वर दर्शन के लिए,राष्ट्र के लिए, विश्व के लिए, मानवधर्म के लिए, स्वतंत्रता के लिए, सर्वधर्म समभाव के लिए, हरिजनों के लिए, दलितों के लिए, आदिवासियों के लिए, गरीबों के लिए समाज से राजनीति तक विविध माध्यमों द्वारा प्रयत्नशील ऐसे एकमात्र संत राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज है। ऐसा लोंगो ने अनुभव किया।

'जनसेवा ही ईश्वर सेवा है' कहकर दि. 11 नवंबर, 1943 कार्तिक पूर्णिमा का सद्गुरू आडकोजी महाराज के स्मृति दिवस महोत्सव में महाराज ने श्रीगुरूदेव सेवामंडल स्थापना किया। बढ़ती जिम्मेदारियों को ध्यान में रखतें हुए महाराज ने प्रचार विभाग का संपूर्ण दायित्व गीताचार्य तुकाराम दादा पर सौंप दिया था। महाराज बलि प्रथा और गोहत्या का विरोध किया। हरिजनों कों मंदिर में प्रवेश

[6] वेलुरकर, हरीभाऊ (2014),साधु सिंध की लहरे, पृष्ठ.11

नहीं था। अतःमहाराज ने भी किसी भी जाति निष्ट मंदिर तथा घर में प्रवेंश न करने का निर्णय लिया। महाराज ने इस निर्णय से सबसे पहले बरखेड का मंदिर हरिजनों के लिए खुला कर दिया गया। उसके पश्चात गाँव के मंदिर, पंढरपुर का विठठ्ल मंदिर, फिर रामटेक का मंदिर भी हरिजनों के लिए खोला कर छोड़ दिया गया। सेवामंडल के माध्यम से महाराज ने कई गाँवों के मंदिर तथा कुए भी अछूतों के लिए खुले कर दिए ।[7] स्थान-स्थान पर महाराज ने व्यायाम शालाएं शुरू की। वहां हजारों युवक और युवतियाँ व्यायाम करना सीख गई। बाद में गाँव-गाँव में व्यायाम मंदिर शुरू किए गए। निजामी सरहद पर लोंगो पर हो रहे अन्याय, लुटपाट एवं बलात्कार रोकने के लिए महाराज ने युवकों को लाठी, भाला, तलवार आदि चलाने का प्रशिक्षण दिया। औद्योगिक प्रशिक्षण कक्षाओं में स्वावलंबी बनने के लिए उन्हे परीक्षण दिया गया । गाँव-गाँव के निरक्षर लोगों को साक्षर बनाने हेतु साक्षरता कक्षाएं चलाई गई। गाँव-गाँव में बोलती दिवारें एवं ज्ञानेश्वर की दीवार का निर्माण किया गया। प्रचार के दौरान उन्होंने हिंदू, बौद्ध, इस्लाम सहित सभी धर्मियों को, भक्तों, साधुओं, भारतीय युवकों, मराठा भाइयों, आलसी भाई-बहनों, पोथी-पुरान पाठकों, विद्वानों एवं रचनाकारों को मानवता का पाठ पढ़ाया।

दिल्ली के राजघाट पर प्रधानमंत्री पं.जवाहरलाल नेहरू,राष्ट्रपति डॉ.राजेंद्र प्रसाद, सरदार वल्लभभाई पटेल, शिक्षाणमहर्शी डॉ पंजाबराव देशमुख आदि की उपस्थिति में महाराज ने भजन, कीर्तन के कई कार्यक्रम किए। उन्हीं की इच्छा से राष्ट्रपति भवन में भी महाराज के कार्यक्रम हुए।

दिन-ब-दिन बढ़ते दायित्वों के साथ भजन विभाग, प्रचार विभाग, कार्यक्रम एवं सम्मेलन का नियोजन तथा मार्गदर्शन जैसे अनेक कार्य तुकडोजी महाराज ने अपने आध्यात्मिक शिष्य गीताचार्य तुकाराम दादा को सौंप दिए थे। गांधी स्मृति दिवस के उपलक्ष्य में महाराज ने सोलह कलमी कार्यक्रम गाँव-गाँव में आयोजित किया। कई लोगों पर इसका असर हुआ। परिना मस्वरूप गाँव-गाँव में व्यसनो में कमी

---

[7] बालकृष्ण पर्वत, विश्व (2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य. पृष्ठ.6

आई, गाँव स्वच्छ तथा आदर्श बन गए, लोगों में समन्वय एवं धर्मनिरपेक्षता स्थापित हो गई। महाराज के लेखन से अनेक रचनाकार प्रभावित हो गए। इसका परिणाम यह हुआ की कई साहित्यसम्मेलनों के अध्यक्ष अथवा उद्घाटक के रूप में तुकडोजी को आमंत्रित किया जाने लगा। इन साहित्य सम्मेलनों में उन्होंने विद्वान और साहीत्यकारों से स्पष्ट रूप से कहा की सामथ्र्य, ज्ञान और आनंद ही साहित्य के उद्देश्यों है। बहुजन समाज की उन्नति ही सही सुधार है। महाराज ने संत सम्मेलन, तमाशा सम्मेलन, शाहिरों का सम्मेलन, हैदराबाद व्यायाम सम्मेलन, राष्ट्रीय मजदुर सम्मेलन, हरीजन सम्मेलन, यात्रासेवा सेवक सम्मेलन, कवि सम्मेलन, अध्यापक सम्मेलन, भजन सम्मेलन इत्यादि आयोजित किए। उनमें अपना विषुदधदर्शन प्रतिपादित कर समाज सुधार के निरंतर प्रयास किए। राष्ट्रीय स्तर पर वेदांत परिषद, साधु समाज सम्मेलन, विश्वधर्म परिषद सम्मेलन और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर युनेस्को परिषद, विश्वधर्म परिषद, विश्वशांति परिषद आदि कई स्थानों पर महाराज को सम्मान प्राप्त हुआ। यहां उन्होंने महत्वपुर्ण भूमिका निभाई और सभी को मानवतावादी दर्शन समझाने का कार्य किया। विनोबा ने भूदान यज्ञ शुरू किया। तब उन्हे चक्रव्यूह में जानकर महाराज ने उनके कार्य में कूच किया और मात्र ग्यारह दिनों में 11,410 एकड जमीन भू दान में प्राप्त करा दी ।[8]

'ग्रामगीता' में तुकडोजी ने अपने जीवन के संपूर्ण अनुभव और ज्ञानानुसार ईश्वर, धर्म, वर्ण, पंथ, संप्रदाय, प्रचार, मनुष्य का आचरन एवं उसके व्यक्तित्व का विकास, सेवा सामथ्र्य, ग्राम स्वराज्य, आदर्श ग्राम निर्माण, गोवंश, आदर्श वेशभूषा, जीवन शिक्षण, महिलोन्नति, तीज-त्योहार, सामुदायिक ध्यान-प्रार्थना, जीवन कला, प्रयत्नों की प्रकाष्टा, लोकतंत्र, जनशक्ति, अनिष्ट रूढी-परंपराओं का उच्चाटन तथा जन्म से पूर्व गर्भाशय के संस्कारों से मृत्यु संस्कारों तक समस्त विषयों का विवेचन किया है। यह परिवर्तनवादी युग ग्रंथ उन्होंने अर्पित किया है, कृषि प्रधान राष्ट्र का पोशिता ग्रामनाथ

---

[8] विरूलकर, हरीभाऊ.पृष्ठ.15

(किसान) को। वे कहा करते थे की, 'मै साहित्य पुस्तकों से नहीं समझा, बल्कि विशाल जनसागर, दिल की गहराई से, आंतरिक छटपटाहट से मैने साहित्य को समझा है। साहित्य की कल्पना मुझे जनसागर में मिल।'।[9] तुकडोजी ने 'ग्रामगीता' में लिखा है की 'गाँव करे सो राव न करे। कह गए चतुर ललामगर हाकिम ध्यान न दे। स्वंय सुधारे ग्राम।' आज हम जो विकसित लोकतंत्र देख रहे है, उसके बारे में उन्होंने उसी समय लिखा है की 'अजी, जनशक्ति कितनी महान्। जो करेगा उसका संगठन। वह स्वर्ग में भी फहराएगा ध्वज। अपने कर्तृत्व से।','गाँव का राज गाँव करे। वहां किसी की भी ना चले होशियारी। हम ही हैं सबसे ऊपर। सुखपूर्वक रहेंगे गाँव में।' इसी दर्शन के कारण आज कर्मयोगी तुकाराम दादा और अण्णा हजारेजी जैसे देशभक्त निर्माण हुए हैं। ऐसा महान् युग परिवर्तन का कार्य इस ग्राम नाथ द्वारा प्रस्तुत'ग्रामगीता' की दिव्य ज्ञान दृष्टि से भगवान के सक्रिय रूप में संत तुकडोजी महाराज करा ले रहे है। यह कार्य अगर ग्राम नाथ नहीं करेगा,तो गुलाम, बेरोजगार, लाचार, कंगाल एवं परावलंबी बनकर मुर्गी-बकरी की तरह मरने की बारी उस पर आएगी ।[10]

सन् 1955 के जुलाई-अगस्त में जापान के शिमिजू और टोकियो में आयोजित विश्वधर्म परिषद तथा विश्वशांति परिषदों में महाराज ने अपने विश्वस्त गीताचार्य तुकाराम दादा को साथ लेकर अपने नाम का डंका बजाया। वहां के संस्थापक एवं प्रेसिडेंट ने अपनी संस्थाओं के मुख्य सलाहाकार बनने का अनुरोध महाराज से किया। महाराज जनता, शासन और साधुसंतों में समन्वय स्थापित करने के ईमानदार निरपरक्ष प्रयत्न कर रहे थे। भारत साधु समाज संस्था के अध्यक्ष भी वे रहे हैं। इसी समय महाराज ने सामूहिक विवाह की पद्धति शुरू की। गरीबों के लिए छात्रालय, निवासी पाठशाला, बालसदन, वृद्धाश्रम खोले। महाराज ने साहित्य, ग्राम, निर्माण, स्वावलंबन, क्रीडा, प्रशासन, शिक्षा,

---

[9] वाघ, रूपराव (1999). पृष्ठ.7

[10] सुधा, (2000), श्री. सिंधु के लहरे , पृष्ठ.17

प्रचार, संगीत जैसे सभी क्षेत्रों में अपने प्रचारक एवं कार्यकर्ता नियुक्त किए थें। इन सभी क्षेत्रों में उन्होंने विविध माध्यमों द्वारा मानवतावादी दर्शन का प्रचार किया। आदिवासीयों के दुर्दम्य, घने-जंगली इलाके में, लमाणों की बस्ती में, भिल्ल लोगों में, आदिवासी लोंगों में भी महाराज के भजन-कीर्तन के कार्यक्रम हुए हैं। महाराज ने मराठी और हिंदी दोंनो भाषाओं में अभंग, भजन, ष्लोक, पवाड़े, ओवी, बरखा, गजल, कव्वाली तथा लेख लिखे है। गद्य एवं पद्य दोंनो रूपों में उन्होंने साहित्य सृजन किया है। भगवान बुद्ध को 2500 वर्ष पुरे होने के उपलक्ष्य में महाराज ने जनजागृति समय दान यज्ञ में गाँव-गाँव में सफाई, कुआं-बावड़ी दुरूस्ती, रास्ते दुरूस्ती, अखाडों का निर्माण, विश्राम गृहों का निर्माण, साक्षरता मुहिम, नदी घाट का निर्माण, प्रार्थना, शिक्षा, महिलोन्नति, गरीबों के लिए मकान बनवाना, व्यायाम की शिक्षा, सुत कताई तथा बनाना जैसे कार्यक्रम सफलतापूर्वक पूर्ण किए ।[11] सन् 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया। तब सीमा पर जाकर महाराज ने ललकारा,'आओ चीनियों मैदान में, देखो हिंद का हाथ!' 'दिलबर के दिलदार हैं हम, दुश्मन के लिए तलवार है हम।' इस प्रकार भजनों के माध्यम से भारतीयो को प्रोत्साहित किया। 'घूसखोरी, लुचपत-कटुताई, जिनके मन में नाच करे। उनके तो दिन नहीं ज्यादा, जनता उनको साफ करे। घूसखोरी, चोरी और लुचपत, इनका अंत ही होना हैं। नहीं तो देश को आग लगेगी, कीससे नहीं कुछ बनना है।' इस प्रकार कठोर शब्दों में भ्रष्ट अधिकारी और राजनीतिज्ञों को वे ललकार रहे थे। आज भ्रष्टाचार ने सभी हदें पार कर दी है। उसी के परिणाम हम भुगत रहे है। महाराज कहा करते थें की 'जनता को लुटने वाले ये भ्रष्ट लोग एक प्रकार के लूटमार ही है, जो डाकुओं के भी डाकू हैं ' ।[12]

सन् 1965 में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमन किया। तब महाराज ने 'सारा भारत रहे सिपाही, शत्रु को दहशाने।' इस प्रकार ललकारा और सैनिकों को चेताया। स्थानीय कार्यो से मुक्त होकर विश्व के कार्यो में जुट जाने के उद्देश्य से महाराज ने सन् 1965 में गुरूदेव सेवामंडल के प्रचार-प्रसार हेतु निर्माण

[11] बाचुलकर, अशोक .(2014),ग्रामगिता, पृष्ठ.20

[12] नोरा,पुनसे (2001),भारत साधू समाज, पृष्ठ.15

किए गए मुख्य केंद्र गुरूकुंज आश्रम के लिए कार्यकारी समिति नियुक्त की और वे स्वतः गुरूकुंज के पास दास टेकरी पर वास करने लगे। सन् 1967 में जब उनका स्वास्थ्य काफी गिर गया, तब अपने आध्यात्मिक शिष्य गीताचार्य तुकाराम दादा को आत्मबल की तप साधना करने के लिए अड्याळ टेकरी पर मौन साधना के लिए भेज दिया। मुंबई के अस्पताल में महाराज ने गीताचार्य तुकाराम दादा के हाथ में गुरूदेव सेवामंडल के प्रचार-प्रसार की राखी बांध दी। चुनाव मंडल से उन्हें मुक्त करके उन पर स्वतंत्र कार्य सौंप दिए। अस्पताल में आपरेशन किया गया, परंतु महाराज ने तो नश्वर देह त्यागने की पूरी तैयारी की ही थी। दि. 11 अक्टूबर, 1968 को अपराह्न 4 बजकर 58 मिनट पर महाराज अपना शरीर त्यागकर ब्रह्मलीन हो गए। *'विश्व हमारा एक परिवार है इसलिए परिवार में हर एक को रहने का हक हैं' 'हर जीव का सम्मान हो, 'हर जीव का भरण पोषण हो' इसी धारणा से चलने का महाराज जी उपदेश देते थे।*[13]

1930 में स्वतंत्रता का जनआंदोलन महात्मा गांधी के नेतृत्व में हुआ, नमक सत्याग्रह के लिये पूज्य बापू ने दांड़ी यात्रा का नेतृत्व किया। देश के सभी शहरों में लाखों ग्रामों में नमक सत्याग्रह, जंगल सत्याग्रह किए गये, कई जगह कॅम्प आयोजित किए गये। संत तुकडोजी इन कैंप में जाकर जनजागरण का काम अपने भजन माध्यम से करने लगे। उन्होंने खादी परिधान कर स्वदेशी कपड़ों का इस्तेमाल करने का जनता को आग्रह किया। 1932-33 में भी असहयोग आन्दोलन में तुकडोंजी महाराज की आवाज बुलन्द रही। जनता को संगठन करने के लिए सालबर्डी का महारूद्रयज्ञ 1935 साली महाशिवरात्री के पुण्यापर्व पर सफलतापूर्वक सपन्न किया। करीब-करीब तीन लाख भाविक वृंद इस यज्ञ में सम्मिलित थे। इतने लोगों के भोजन-निवास की बड़ी सहयोजित से व्यवस्था की गयी थी। इस रूद्रयज्ञ में संत महात्माओं ने अपनी उपस्थिती रखी। पंढरपुर से वैराग्यमूर्ति गाडगे बाबा, जयपूर से संत मंगनी महाराज, शेगाँव से संत हरी महाराज, धमन गाँव से संत मुंगसाजी महाराज जैसे सतपुरुष इस

---

[13] रूपराव वाघ,(2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य. पृष्ठ7,10

यज्ञ में सम्मिलीत हुए। यज्ञ के रिपोर्ट में 36 सतपुरूषों के नाम पाये जाते थे। एक दिन में तीन लाख लोगों ने महाप्रसाद ग्रहन किया। इस से उस रूद्रयज्ञ की भव्यता ध्यान में आती है ।[14] जन जागरण तथा जन संगठन के हेतु महाराज जी ने सप्ताह, यज्ञयाग किए लेकिन कुछ विरोधियों ने महाराज जी की बदनामी करने की कोशिश की। महात्मा गाँधी के पास भी कुछ विरोधी तत्वों ने महाराज जी के आचार विचार पर विरोध प्रकट किए। महात्मा जी ने महाराज जी को नागपुर मं मिलने का संदेशा दिया। महाराज जी अति हर्ष से श्री टिकेकरजी के बलेपर महात्मा जी से मिले, भजन भी सुन पाये। उनका प्रभावशाली व्यक्तित्व देखकर पूज्य बापू ने महाराजी को सेवाग्राम आश्रम में सत्संग के लिये सहर्ष आमंत्रित किया। पूज्य बापूने तुकडोंजी की दिव्यता को पहचान लिया।

सेवाग्राम आश्रम में -

1936 के अगस्त माह में महाराज जी सेवाग्राम पहुंचे। बड़े हर्ष से बापू और बा ने उनका स्वागत किया। एक माह तक महाराज जी का सेवाग्राम में मुकाम रहा। पूज्य बापू से विभिन्न विषयोंपर चर्चा हुयी। अध्यात्मिक सतसतंग हुआ। महाराजजी बापू तथा आश्रमवासियों को भजन सुनाते थे और सभी तन्मयता से सुनते थे। सोमवार के दिन बापू का मौन रहता था। उस दिन महाराज जी के भजन में वे इतने भावविभोर हो गये की, उन्हें मौन का ख्याल ही नहीं रहा और कहिए महाराज कह कर उनका मौन टूट गया ।[15]

उस समय सेवाग्राम आश्रम में डॉ. राजेंद्र बाबू, डॉ आर्यनाय कम्, प्यारेलाल जी, मीरा बेन, पंडित जवाहरलाल, माता कस्तुरबा, जमनालाल बजाज, आचार्य विनोबा, भन्साली जी जैसे राष्ट्रनेता तथा

---

[14] वेलुरकर, हरीभाऊ (2014), साधु सिंध की लहरे .पृष्ठ22

[15] सुधा,(2000), श्री. सिंधु के लहरे(पुर्वाध), पृष्ठ23,

आचार्यों से महाराज जी का घनिष्ठ परिचय हुआ और व घनिष्ठता आगे बढती ही गयी। महाराज जी के आध्यात्मिक विचार, जनजागरण की प्रतिभा और जन आत्मियता का प्रभाव इन सब नेताओं पर रहा। गांधीजी के व्यक्तित्व का भी प्रभाव माराजजी पर रहा परंतु महाराज उनके शिष्य ना बने।

स्वतंत्रता आन्दोलन में

वहीं महाराज जी एक ऐसे देशभक्त थे की जिन्होंने भारत की स्वतंत्रता आन्दोलन में हिस्सा लिया। जन संगठन तथा जन जागरण कर स्वतंत्रता की ध्वजा फहराई। ऐसी मिसाल भारत के इतिहास में दूसरी नहीं पाती। महाराज जी द्रष्टा थे, क्रांतदर्शी थे। उन्हें भविष्य अपने आंखों से दिखता था। आगे आने वाले क्रांति की लहरे उनकी जबान पर थी इसीलिये उन्होने 1941 में चिमेंर में चातुर्मास्य में ही चिमूर क्रांति की नींव डाली थी। 1942 के मई माह में मोझरी धर्म सेवाश्रम में युवकों का एका बड़ा कॅम्प आयोजित किया था। इस कॅम्प में ऐसी शिक्षा प्रदान की थी की स्वतंत्रता संदेश देते वक्त जान कुर्बान करने की तैयारी हो। हम गुरू गोविंद सिह के पंचप्यारे हैं, हम छत्रपति शिवाजी की संतान हैं, हम भगतसिंग के भाई हैं, हम वीर सावरकर के क्रांति मित्र है। हम गांधीजी के अहिंसात्मक आन्दोलन के ग्रामनायक हैं हमारा लक्ष्य हैं स्वतंत्रता, हमारी अस्मिता है स्वतंत्रता । अगस्त क्रांति के पूर्व ही महाराज जी ने आष्टी, चिमूर, यावली, बेनोडा, खरांगना, तलेगाँव ऐसे कई गाँवों में स्वतंत्रता का सुप्त चिनगारी-स्तम्भ पक्का किया था। अब केवल गांधीजी के आदेश की ही प्रतिक्षा थी। आदेश मिलते ही चिंगारी धधक उठी। उसका अनोखा रोमांचकारी इतिहास हैं ।[16] आठ अगस्त को बम्बई में कांग्रेस की महासभा में महात्मा जी ने 'करेंगे या मरेंगे' यह जनता को आदेश दिया और नौ अगस्त को वह आदेश गाँव गाँव पहुंच गया। तूफान की तरह सारा देश जाग उठा 'उठो, अब करलो तैयारी' यह आवाज गूंज उठी। क्रांति की गजले लोक गानें लगें। इस स्फूर्तिदायी गीतों पर कदम बढ़ाते बढ़ाते

[16] पर्वत,विश्व बालकृष्ण (2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य. पृष्ठ17, 18

चिमूर-आष्टी में नागपंचमी के दिन, 16 अगस्त को भारी स्वातंत्र्य संग्राम हुआ। कई वीर शहीद हुए, अंग्रेजी सत्ता ने धुवांधार गोलियाँ चलायी, वीरो ने भी पुलिस थाने के नौकरशाही को सबक सिखायी। वहीं महाराज जी 9 अगस्त को आष्टी से निकले, जहाँ भी गये क्रांतिजन गाये, लोक चेत गये, दूसरे ही दिन उस गाँव में क्रांति का ध्वज लहरा। महाराज जी आगे बढें और पीछे स्वतंत्रता देवी का क्रोध उठा। वे चंद्रपुर पहुंचे, चातुर्मास्य शुरू हुआ, दो-तीन दिन में ही महाराजजी को अंग्रेजी सत्ताने जेल का रास्ता दिखाया। चंद्रपूर से नागपुर सेंट्रल जेल में लाया गया, थोडें ही दिन में रायपुर जेल में भेज दिया गया। एक महान संत को जेल की कोठरी में बंद किया। सौ दिन, 28 अगस्त से 4 दिसम्बर तक महाराज जी जेल में थे। स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदुस्तान के किसी भी संत को जेल की हवा न हीं खानी पड़ी। राष्ट्रसंत जी का एक अलग ही व्यक्तिमत्व था।[17]

गांधी स्मृति दिन

महात्मा गांधी इस बीसवीं शताब्दि के सबसे अधिक श्रेष्ठ महापुरुष माने गये हैं। सारी दुनिया में उनके विचार प्रणाली का बोलबाला है परंतु व्यवहार में बहुत ही कम राष्ट्रधुरंधरो ने उसे प्रत्यक्ष व्यवहार में लाने का प्रयास किया। तुकडोजी महाराज संत थे पर उनका जनता जनार्दन हीं भगवान था इसीलिये महात्मा जी की विचारधारा से ग्रामीण भारत उन्नत हो सकता यह उना मानता था। गांधीजी के पश्चात्त उनके विधायक कार्य का दर्शन देहातियों में करने लिये तुकडोजी महाराज ने गांधी स्मृति दिन समारोह आदर्श ग्राम के प्रयोग तथा प्रात्यक्षिक से पांच साल तक मनाया। 1953 में आम गाँव में जो गांधी स्मृति दिन समारोह मनाया था वह अनोखा ही था। देश विदेश के नेताओं ने यह प्रत्यक्ष देखा, आम गाँव के आसपास सौ गाँवों में इसके प्रयोग किए गये। हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े समाज सुधार यह प्रयोग देखकर आश्चर्य करने लगे। 'संत हो तो ऐसा हो' यह शब्द कीतनेही नेता कहने लगे। गुरुकुंज प्रथम गांधी स्मृति (1949) के लिये भारत के राष्ट्रपति डॉ राजेन्द्रप्रसाद स्वयं आये। महाराजजी का कार्य

[17] सुदाम सावरकर, जीवनयोगी-खंड-5.पृष्ठ,-28

देखकर उन्होने कहा 'तुकडोजी महाराज हमारे राष्ट्रसंत है' और सभा में स्थित हजारों लोगों ने उसका स्वागत किया। तब से तुकडोजी महाराज जी को सारे लोग, 'राष्ट्रसंत' कहने लगे और मानने लगे, हिन्दुस्तान में महाराज जी के सिवाय अन्य किसी को भी 'राष्ट्रसंत' उपाधि से सम्मानित नहीं किया गया। हिन्दुस्तान के इतिहास में यह एक अनोखा व्यक्तित्व है यह सभी ने मान लिया। इतिहास जिसका साक्षी है।[18]

ग्रंथराज ग्रामगीता

राष्ट्रसंत श्री तुकडोजी महाराज केवल चार कक्षा पढ़े थे। किसी से शिक्षा-दिक्षा उन्होंने नहीं ली, ना किसे दीक्षा दी, ना कोई अपना वारिस, या शिष्य बनाया। उन्होने जो उनके पास आये उसे शिक्षा नहीं दी परंतु सलाह दी। अपनी वाणी आणि कलम से समाज प्रबोधन किया। समाज प्रबोधन का एक प्रभावी साधन है साहित्य। महाराज जी नौ साल के थे तबसे उन्होने अभंग-भजन लिखना शुरू किया। उनकी कलम चलती ही रही, उनकी कलम से ओवी, दोहा, कव्वाली, गजल, अभंग, भजन श्लोक, सुविचार, लेखांक,भाष्यअविरत आते ही रहे। राष्ट्रसंतजी शीघ्र कवि थे, प्रतिभावान साहित्यकार थे। उनके शब्द से मुर्दे भी जग जाते थे, वे आत्म विश्वास से कहते थे 'मुर्दे जगा दूं शब्द से' राष्ट्रसंतजी कवि नहीं थे। वे ते करूना थे दीन की, दुनियों की। उनका लिखने का निश्चित समय नहीं था। जीप में बैठे-बैठे कभी वे लिखते, कभी सुबह ध्यान के पश्चात लिखते, जब भी उर्मी आयी की कागज पर पेन चलाते, उन्होंने एक बार लिखा, उसे कभी खोड़ा नहीं, अक्षर तोड़ा नही, स्वयं वहीं महाराज जी लिखते हैं 'तोडा नहीं अखर कभी, फिर के न देखा बाच के। रंग में लिखा, जनमें सिखा, आनंद पाया नाच के।' इतनी उनकी दिव्य प्रतिभा थी। 1943 से श्रीगुरूदेव मासिक में संचालकीय लेख नियमित से

[18] सुदाम सावरकर, जीवनयोगी-खंड-5.

उन्होंने लिखे। उनकी सौ से भी अधिक किताबें हैं परतुं सबसे अग्रस्थान है उनके ग्रंथराज ग्रामगीता का। 1953 साल की आशाढ़ी एकादशी के दिन श्री क्षेत्र पंढरपुर में उन्हें आत्मस्फुर्ति हुयी, जिसे स्फुर्ति का प्रगट अविष्कार याने ग्रामगीता ग्रंथ है। भजन दौरे में केवल चार-पाच माह में यह ग्रंथ, 4674 आवियोंका प्रासादिक ग्रंथ पूरा हुआ। यह ह ग्रामगीता 1955 में प्रथमतः प्रकाशित हुअी। वह पढकर बड़े-बड़े पंडित-विद्वान-साहित्यिक आश्चर्य करने लगे। जीवन की सारी समस्यांओं का विचार ग्रामगीता में है, और उन्हें हल करनेका तरीका भी इसमें है । अध्यात्मशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, मानसशास्त्र आदि शास्त्रों का तत्वज्ञान यहां मिलता है। सभी धर्मो का, पंथों का समन्वय करने का इसमें उपाय है। वेदो का सर, भगवद्गीता का सक्रिय रूप, बाइबल, धम्मपद, कुरान के तत्व भी इसमें मिलते है। 41 अध्याय के इस ग्रंथ में 41 महामानवों के फोटोग्राफस् दिये है। येशु ख्रिस्त से लेकर गोरा कुम्भार तक सीभ संत महात्मागन जिस ग्रंथ में दिखते है । अर्वाचीन साहित्य में ग्रामगीता चन्द्रमा जैसे चमक रही है, नजदीक के के भविष्य में जिसका प्रचार-प्रसार भारी पैमाने पर होनेवाला है। ग्रामगीता का अंग्रेजी, हिन्दी, तेलगू, संस्कृत अनुवाद भी उपलब्ध है। राष्ट्रसंत जी की हिन्दुस्तान के एकता तथा अखंडता के लिये यह एक बड़ी देन है जिसमें कोई संदेह नहीं। यह ग्रंथराज ग्रामगीता हर एक नागरिक ने अवश्य पढना चाहिए, वह पढ़ते ही जीवन को नयी दिशा अवश्य मिलेगी। ग्रामगीता के अलावा 3538 भजन, 2100 अभंग, 24121 ष्लोक 652, हजार से भी अधिक लेखांक-प्रवचन वहीं महाराज जी के कलम से निकले हैं। अभी भी बहुत सा ग्रंथ भंडार पर अप्रकाशित हैं।[19]

[19] (19) पुनसे नोरा, (5 नोव्हेंबर 2001),भारत साधू समाज.पृष्ठ17, 18

जीवन कला के ज्ञाता

राष्ट्रसंतजी के जीवन का अध्ययन करते-करते यह पता चली की वे सभी कलाओं में निपुन थे। भजन-भाषण तो दिन-रात करते थे। वे कभी घोड़े पर सवार होकर एक जोरदार रपेट मारकर आते, कभी हाथ के ईशारे से छकड़े के बैलों को दौडाते, कभी संगीततज्ञ लोगों में अपनी खंजेड़ी की उच्चत्तम धून बजाते, कभी हाथ में तुंबरा लेकर अभंग गाने में मगन हो जाते, कभी जंगल पहाड़ों में व्याघ्र जैसे पाके साथ खेलते, तो कभी ध्यान लगाकर योगी जैसे बैठ जाते, राष्ट्रसंत जी ने जहाज भी चलाया था। उन्होंने सारी सारी कलायें आत्मसात की थी परंतु सभी में जीवन कला के संकेत थे। राष्ट्रसंतजी के नश्वर शरीर के साथ सभी कलाये गयी लेकिन उनके साहित्य कला के अविष्कार आज भी अजर-अमर है और प्रबोधन कार्य करते है। [20]

विश्वधर्म परिषद में

आप जानते है की 1893 स्वामी विवेकानंद जी ने अमेंरिका के शिकागों शहर में आयोजित विश्वधर्म परिषद में भारतीय तत्वज्ञान की झलक दिखाकर सारे विश्व को अपनी उच्चतम प्रतिभा दिखायी थी, उसी तरह 1955 में जपान में विश्वधर्म परिषद का उद्घाटन राष्ट्रसंत जी के 'हर देश में तू हर भेष में तेरे नाम अनेक तू एक ही है, 'दस भजन से खंजेड़ी-निनाद में हुआ था। उद्घाटन के समय का उनका भाषण सुनते ही विद्वान धर्माचार्य दांतों तले उंगली दबाने लगे थे। एक अनपढ़ महात्मा की ध्वनी में कितना प्रभाव है यह अनुभव पाया था। जापान के भाषण आज भी उपलब्ध हैं, महाराज जी की 'मेंरी जापान यात्रा' पुस्तक पढ़ते ही जापान के तथा सारे विश्व के धर्माचार्य महाराजजी के शब्द को कितना मानते थे यह जानकारी मिलती है। इतना ही नहीं जापान की नामांकित संस्था ने राष्ट्रसंत जी को जापान में

ही सदा के लिये रहने का आग्रह किया था। पर महाराज जी ने का 'हमारे भारत में ही बहुत काम पड़ा है।' और वे भारत लौट आये।[21]

भारत साधु समाज

'भारत साधुओं का देश हैं ऐसा कहा जाता हैं इसका कारण यहां अनेक धर्म हैं, अनेक पंथ हैं, सम्प्रदाय हैं, आखाड़े हैं। यहां हजारों धार्मिक संस्थाऐं विश्वस्त हैं, धर्मशालाएं हैं। यहां गंगा जमुना जैसी पवित्र नदियाँ हैं और उनके साथ हजारों तीर्थ क्षेत्र हैं, देश में किसी भी कोने में जाईये वहां मंदिर, मस्जिद, चर्च, विहार हैं और अपनी-अपनी विचारधाराओं का प्रचार-प्रसार करने की स्वतंत्रता हैं जिस कारण हर एक धर्म-पंथ के आयार्च बनाये हैं, कोई वैराग्यता से बैरागी बने हैं। राष्ट्रसंत जी ने भारत भ्रमण में यह सारा दृश्य देखा तब उन्होंने सारे साधओं का संगठन करने का प्रस्ताव रखा, तब साधुओं ने वहीं राष्ट्रसंत जी के ही गले में अध्यक्षता की माला पहना दी।[22] कई साल तक महाराज जी भारत साधु समाज के अध्यक्ष रहे, भारत के कोने-कोने में दौरा करके, कुम्भ मेंले में हिस्सा लेकर, वेदान्त परिषद में जाकर अपनी निजतत्व की, लोक सुधार की बातें सुनवायी। कई अखाड़ों के झगड़े तोड़ दिया। सबको समन्वय का पाठ पढ़ाया। भारत साधु समाज के साथ ही वहीं राष्ट्रसंत जी ने भारत सेवक समाज, सर्वोदय समाज, साहित्य सम्मेलन, राष्ट्रभाषा परिषद, संत संम्मेलन, कुष्ठसेवा, नशाबंदी सम्मेलन, आयुर्वेद सम्मेलन आदि समाज में सक्रियता से सहभाग लिया, तथा प्रबोधन किया। आदिवासी सुधार के लिये भी प्रयास किया।[23]

---

[21] रूपराव वाघ,(2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य. पृष्ठ14,

२२ हरीभाऊ वेलुरकर, (2014), साधु सिंध की लहरे पृष्ठ25, 26

विश्व हिन्दु परिषद

हिंदू धर्म के लोग सारे विश्व में अपनी-अपनी आवश्यकतानुसार कई सदियों से रहते हैं। इन सबका संघटन हो यह विचार हिंदूधर्म के नेताओं ने विशेषतः श्री आपटे जी ने रखा, तब सबका ध्यान राष्ट्रसंत जी की ओर गया। स्वयं आपटेजी वहींमहाराजजी से विचार विमर्श करने गुरुकुंज आये। बम्बई में श्रेष्ठ हिंदू नेताओं की चिन्मयानंद मिशन में सभा हुई। इसमें राष्ट्रसंत जी उपस्थित थे, उन्हें ही विश्व हिंदू परिषद का अध्यक्ष चुना गया। राष्ट्रसंत जी बचपन से चाहते थे की जिस देश का युवक स्वस्थ व बलवान है, वही अपनी देश की सुरक्षा कर सकता है इसीलिये उन्होंने गांव-गांव में व्यायाम शालाएं शुरू की थी। अपने प्रचारकों को लाठी चलाना, जांबिया चलाना, मलखांब-कवायत करना सिखाते थे।

हैदराबाद का निजाम भारतीय गनतंत्र में नहीं आना चाहता था, उस वक्त रझाकारों से दो हाथ करने के लिये वहीं महाराज जी के तथा सेवा मंडल के सेवकों ने अपनी सेवा (13.12.47 से 20.02.48 तक) रूजू की थी। 1962 में चीन ने हमला किया, 1965 में पाकिस्तान ने ललकारा, तब राष्ट्रसंत जी ने राष्ट्र सुरक्षा फंड जमाया, कई युवकों को सेना में भरती कराया। कई बार दौरा करके लोगों को जगाया। इतना ही नहीं तो 'आओ चिनिओं मैदान में देखो हिन्द के हाथ, तैयार हुआ है हिन्द तुम्हारे साथ।।'' कहकर असाम के नेफा विभाग की सरहद पर जाकर ललकारा था, भारतीय जवानों में जाकर खंजिड़ी के निनाद में जोश भरा था। राष्ट्रसंत जी ने 1965 में पंजाब की सीमा पर जाकर भारतीय सेना में नई स्फुर्ति भरी थी।

महानुभावों का प्रेमी

तुकडोजी कला प्रेमी थे लेकिन इससे ही अधिक काव्य मनुष्य प्रेमी थे । उनका संबंध ग्राम-ग्राम के छोटे छोटे किसान-भाईयों से था, नाइयों से था, हरिजनों से था, बढईयों से था, गोंड-गवारीयों से था। सभी पिछड़े जाति-अनुसूचित जातियों से था। कभी मुस्लीम भाई उनेका स्नेही थे। कई ईसाई-बौध्द भाई उनके भजन के साथी थे । उनका शैव-वैष्णव, दिगम्बर,-श्वेताम्बर, शिया-सुन्नी-सूफी, हिमायन-हिनायन, कॅथालिक- प्रोटेस्टंट सभी से नाता था ।[24] वहीं राष्ट्रसंत जी का संबंध राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, डॉ राजेन्द्र प्रसाद, जयप्रकाश नारायन, आचार्य विनोबा, पं.जवाहरलाल आदि महानुभावों से था। उनका संबंध कई संत महंतो से था, वैराग्यमूर्ति गाड़गेबाबा, आत्मज्ञानी लहानुजी बाबा, सत्यदेव बाबा, मुंगसाजी महाराज, खटेश्वर महाराज, पुंडलिक बाबा, स्वामी भास्करानंद, महामंडलेश्वर अखंडानंद जी, प्रभुदत्त ब्रम्हचारी आदि परकोटी-परात्पर कोटी के साधु महात्माओं से था। स्वामी सीतारामदास महाराज जी तो उन्हें 'मेरे भगवान कहते थे?' साने गुरूजी, वि.स. खांड़ेकर, दादा धर्माधिकारी, वि.भि. कोलते, सोनोपंत दांड़ेकर, पु. ल. देशपांड़े, आ. रा. देशपांड़े समान साहित्यकार राष्ट्रसंतजी का सदैव आदर करते थे। नागपूर, मुंबई, दिल्ली रेडिओ स्टेशन से उनका प्रेम नाता था। तव्दतच कई समाचार पत्रों के सम्पादक, प्रकाशक राष्ट्रसन्त जी से बातचीत करते रहते थे। मध्यप्रांत बरार के गाँव-गाँव में उनका परिचय था, उनके खंजरी भजन ने हजारों लोगों का दिल खिच लिया था, उनके किसी भी भजन कार्यक्रम में चालीस पच्चास हजार से कम श्रोता नहीं रहते थे। राष्ट्रसंतजी को देश-विदेश के कई लोग जानते थे, उनकी प्रतिभा तथा सेवा कार्य से अमेंरिका, जापान, मलाया, थायलंड, बर्मा के कई महानुभाव आकर्षित हुए थे। एक दिन श्रीगुरूदेव सेवा के मंडल के तत्वज्ञान की शिक्षा-दिक्षा सारा जगत पायेगा यह राष्ट्रसंत जी की भविष्यवाणी है।[25]

---

[24] सुदाम सावरकर, संक्षिप्त जीवनदर्शन(ग्रामगीता).पृष्ठ-11,

[25] सुदाम सावरकर, संक्षिप्त जीवनदर्शन(ग्रामगीता).पृष्ठ-11,

संचालक मंडल गठन

'राष्ट्रसंत जी ने श्री गुरूदेव सेवामंडल का गठन तथा संचालन 1965 तक किया, अव्याहत जीवन प्रवासी होने से मंडल की ओर अपना पूरा ध्यान नहीं दे सकते थे। सेवामंडल का विस्तार अब विशाल हो गया था। शिक्षण संस्था, आश्रमशाला, रामकृष्ण हरिमंदिर, अस्पताल, गोपालन, कुटिरोद्योग, भजन-प्रचार विद्यालय, प्रचार विभाग, प्रार्थना मंदिर, ग्रंथालय, प्रवासी भवन, आदर्श ग्रामयोजना, छात्रालय, प्रकाशन आदि विभाग स्वतंत्ररूप से कार्य कर रहे थे। स्थानिक तथा देशी-विदेशी लोगों को मिलने का तांता लगा रहता था। गुरूकुंज आश्रम कार्यालय में बैठने के लिये उन्हें समय भी नहीं मिलता था। अतः वहीं महाराज जी ने संचालक मंडल की ओर सारी जिम्मेदारी सौंपकर, बंधन से मुक्त होने का विचार किया, संस्था का रजिस्ट्रेशन कर लिया और महाराष्ट्र के गृहमंत्री श्री बाळासाहब देसाई के नेतृत्व में संचालक मंडल गठित किया और 1965 मैं संचालक मंडल की शपथ विधी संपन्न कर आप दास टेकड़ी की कुटिया में निवासस्थान करने लगे।[26]

---

[26] पुनसे नोरा, (5 नोव्हेंबर 2001),भारत साधू समाज. पृष्ठ17

राष्ट्रसंत तुकडोजी एक महान देश प्रेमी थे। उन्होंने स्वातंत्र्य संग्राम में उनके उम्र के 21 वर्ष से वह स्वातंत्र्य संग्राम में। अपने आपको उन्होंने निचावर कर दिया, 1930 के विदर्भ गोंडवाना सत्याग्रही शिविर में, ''झुठी गुलामशाही के डर बता रही है।'' ऐसा तेजस्वी राष्ट्रीय भजन उन्होने उस शिविर में गाया, ब्रिटिशो ने उनके गिरफ्तार करने का, प्रयत्न किया परंतु वह प्रयत्न असफल हो गया। 1933 का चिंमुर का चार्तुमास पर उनकी क्रांति की शुरुआत हुई। 1935 में, तुकडोजी के प्रमुख उपस्थिती में सालबर्डी में संपन्न होनेवाला महारूद्रयाग महायज्ञ में। न भुतो ना भविष्यतरी ऐसा हुआ, इस यज्ञसे तुकडोजी का महान नेता भारत में तैयार हुआ । असमें महायज्ञ नशामुक्ती अनियमीतता इन सब पर आहुती देकर तुकडोजी सबको जीवन का काया कल्प करनये के लिये इस साल जीन जनसमुदाय को कार्यवृत्त करने के लिये। गुरूदेव सेवाश्रम की स्थाना की, प्रेमी युवकों को देश धर्म का स्वतंत्र्यतेका' अर्थ समजाकर उन्हे स्वतंत्र्य संग्राम में। अपने साथ जुडाया आगे चलकर 1942 में उसी परिसर के युवकों ने राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज से प्रेरणा लेकर एक बहुत बडा स्वतंत्र्य क्रांति की उस में बहुत से क्रांतीकारी शहीद हुए इस लिये, आष्टी गाँव आष्टी शहीद इस नाम से जाना जाता है ।[27] 1936 में तुकडोजी के व्यक्ती महत्व से आकर्षित होकर ब्रिटिश को चलजाव का इशारा देने वाले तुकडोजी को महात्मा गांधी ने सेवाग्राम आश्रम में एक महीना अपने साथ रखा वहा देश विदेश से हर जगह से गांधी जी को मिलने के लिये आने वाले नेता और कार्यकर्ता देश के स्वतंत्र्य संग्राम के विषय में चर्चा हो उससे और उनमें तुकडोजी भी शामिल हो ऐसी गांधी जी की इच्छा थी ।

[27] सुदाम सावरकर, जीवनयोगी-खंड-5.पृष्ठ 35, 36

इस काल में तुकडोजी गुरूकुंज और नागठाना आश्रम में युवकों को प्रशिक्षाण के लिये चातुर्मास किया।''राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ'' भारत सेवा दल कुस्ती गीरी के अखाड़ा आदि संस्था वो में जाककर ''जाग उठो बाल विरो अब तुम्हा'री बारी।'' ऐसा भजन गाकर उन्होको भारत स्वतंत्र्य संग्राम में उतरने के लिये उनको ललकारा इ.स. 1941 में तुकडोजी युवकों के स्वतंत्र्य राष्ट्रधर्म प्रशिक्षाण वर्ग का आयोजन किया। प्रतिदिन बहुत से हजार लोक अपनके प्रभावी भजन भाशनो से राष्ट्रीयता की दिशा मिली और देश के स्वातंत्र्य संग्राम में सहभाग होने के लिये परावृत्त किया। [28]

धर्म जागरण

संत तुकडोजी दिल और मन से भजन गाते थे। उन्हें भजन प्यारा था परंतु भजन का केवल टाल कुटना यह उनका अर्थ नहीं था। भगवान ही सब करेंगे यह उनकी शिक्षा नहीं थी। भगवन भक्ति उन्हें प्रिय थी, लेकिन उनका भगवान पत्थर की मूर्ति में नहीं था, वे पूछते थे, मंदिर में क्या कर रहा आंख ली लगा कर देखता? 'क्या वहां भगवान है? नहीं, वहां भगवान नहीं। भगवाना तो भक्त के घर है, हे मित्र! तू भी कुछ दिन की सेवा कर! ।[29]

तुकडोजी महाराज भगवान के गुणगाते थे। उसके साथ-साथ कर्मयोग की पहचान कर देते थे, कर्म-भक्ति-ज्ञान का संगम जहां है वहीं भगवान का स्थान है। किसी भी धर्म के आप अनुयायी हों मुझे इतराज नहीं लेकिन ध्यान रहे धर्म धारणा के लिये होता है। व्यक्ति का ध्यान ना करो, शक्ति का ध्यान करो। व्यक्ति निष्ठा से दुख आता है, शक्ति निष्ठा से, तत्व निष्ठा से मानव विशाल होता है।

---

[28] सुदाम सावरकर, संक्षिप्त जीवन दर्शन,(ग्रामगीता).पृष्ठ37,

[29] विश्व बालकृष्ण पर्वत, (2 ऑक्टोबर 2007), 38

ये सारे दलाली करने लगे है, भगवान के नाम पर पेट पूंजी के काम में लगे है इसलिये स्वतंत्र विचार से सोचकर मूलतत्व को पहचानने की सलाह देते रहे। जब मुलतत्व की पहचान हो जायगी तब सारा विश्व अपने अंदर समाया है। उस की अनुभुती आ जायेगी।

संत तुकडोजी ने धर्म का अध्ययन करके धर्म के ठेकेदारों का आचरण देख के और सामान्य जनता की जीवनी का निरिक्षण करके धर्म का मर्म समझाया । वे मंदिर गये,, मस्जिद गये, गिरजा घर भी गये। जहां भी गये वहां उन्होंने एक ही भगवान देखा, एक ही तत्व देखा |[30] सभी धर्म के लोगोंको समझाया 'कहीं भेद ना', 'नेकी करो', 'अच्छे रहो', 'सच्चे राहे' उसी को धरम कहलायेगें । धर्म की परिभाषा दलालों ने बदला दी है इसलिये तुकडोंजी महाराज सभी को उनके ही धर्म संत के प्रमाण देकर सच्चा धर्म जानने की आग्रह करते थे-'आप इन्सान बनो, नौजवान बनो'।

जन-जागरण

सेवाग्राम आश्रम में पूज्य बापू और महाराज जी इन दोनों का एक दूसरे के प्रति बहुत प्रेम था । आश्रम से बाहर आने के बाद महाराज जी के खंजेड़ी ने जन जागरण का कार्य अधिक तीव्रता से उठाया। रात दिन उन्हें राष्ट्रधर्म की धुन लगी । इस प्रकार के कई भजन अपनी मस्ती में महाराज जी रात-रातभर गाने लगे,गाँव-गाँव जाकर जनता को जगाने लगे। 1936 से 1942 तक महाराज जी जन जागरण, जन संगठन, तथा जन आन्दोलन की भूमिका तैयार करते रहे, कई जगह चातुर्मास्य का आयोजन किया, कई जगह कॅम्प लगाये, एक जगह व्यायाम शालाएं, गो-शालाएं बनाई कई जगह आरती मंडल शुरू किए, मध्यप्रान्त-बेसार के गाँव-गाँव में स्वतंत्रता का संदेश, रामधून के माध्यम से ग्राम संगठन, भजन कीर्तन-गोपाल कलेवा के साथ भक्ती-ज्ञान तथा कर्म के यज्ञ चलाये- गुरुकुंज मोझरी में धर्म सेवाश्रम

---

[30] ईश्वर प्राप्ती का रहस्य. पृष्ठ37, 38

की नींव 1935 डाली और भजन की किताबों का प्रकाशन भी किया। महाराज जी की व्यक्ति-प्रतिभा इतनी प्रभावशाली थी की कोई भी व्यक्ती उन्हें देखते ही नम्र हो जाता था। वह योगी की प्रतिभा थी, वह आत्मज्ञानी महापुरुष की शक्ती थी, वह महाभक्त राज सेवक की मानसिक कुशलता थी।[31]

तुकडोजी का क्रांति संदेश

सन1942 में वरखेल में तुकडोजी ने अपने कार्यकर्ताओं को क्रांति का संदेश दिया। इस सभा में पचास हजार से भी ज्यादा लोग उपस्थित थे इस सभा में उन्होंने ब्रिटिश हुकुमत के खिलाफ आवाज उठायी इसका परिणाम विदर्भ के आंदोलन में दिखाई दिया। तुकडोजी महाराज अपने संदेश में कहा था की ये देश हमारा है। तो इस देश को बचाने की जिम्मेदारी हमारी है। हमें इस देश को अपना घर समझना है, अगर हमारे घर में कोई बाहर का व्यक्ति आये तो हम उसे निकाल देते है। उसी प्रकार ब्रिटिश है यह उस समुदाय को सभा में समझाया। क्रांति यह एक की नही। यह हम सब की होनी चाहिए, तुकडोजी ने लोगों से यह आवहन किया की आप अपने धर्म पंथ और संप्रदाय से उठकर इस देश के स्वतंत्रता के लिये सिर्फ राष्ट्रधर्म को सिर्फ अपना धर्म माने ऐसा उन्होंने उस सभा को अपने राष्ट्र संदेश में संबोधित किया।[32]

चिमुर संग्राम

1933 में चिंमुर संग्राम हुआ इसमें तुकडोजी की भूमिका बहुत बढी थी। तुकडोजी ने इस संग्राम का नेतृत्व किया था इस संग्राम में सभी धर्म, पंथ और संप्रदाय के लोगों ने सहभाग किया था तुकडोजी महाराज के जीवन का यह पहला स्वतंत्र्य संग्राम था जिसका नेतृत्व खुद तुकडोजी ने किया था यही

---

[31] गुरूकुंज आश्रम, श्रीगुरूदेव 'मासिक', पृष्ठ 35

[32] सुदाम सावरकर, जीवनयोगी-खंड-5. पृष्ठ45,

पर तुकडोजी ने इस संग्राम के लिये । पुरे चंद्रपुर जिला का भ्रमण किया और गाँव में शहरो में स्वतंत्र्यता के प्रति लोगों को जागृत किया और इस से चिमुर का महा संग्राम हुआ। इस आंदोलन को रोकने के लिये ब्रिटिशो ने बड़ी निर्भयता से कोशिश की इनमें 20 लोग शहीद हो गये 200 लोगों को बंधी बनाया गया,फिर भी वह आंदोलन प्रभावित नहीं हो पाया।' इससे यह समझ आता है की वह आंदोलन कितना तीव्र था ।

आष्टी संग्राम

गुरूदेव सेवा आश्रम में तुकडोजी ने जीव प्रेमी युवकों को स्वातंत्र्य संग्राम में उतरने के लिये प्रेरित किया था उनी युवकों ने आष्टी यह गाँव वर्धा जिल्हे में है। वहाँ पर संग्राम उन्ही युवकों के प्रयास से हुआ तुकडोजी ने उन युवकों के समुदाय का नेतृत्व किया था। उन युवकों के सभा में राष्ट्रसंत तुकडोजी भजनः- ''पथर बनेगे बम्ब भक्त बनेगे सेना घर घर में आजादी लेकर राम राज्य कह लायेगे'' यह भजन गाया था। तुकडोजी के विचारो से वह युवक इतने प्रेरित थे की उन्होने उस क्रांति की मशाल का पुरे वर्धा जिल्हे में फैलाया और आष्टी संग्राम में पुरे वर्धा जिल्हा को शामिल किया। आष्टी संग्राम यह एक सत्याग्रही था लेकिन ब्रिटिशो के अन्यायकारी रवैये की वजह से वह एक बडा संग्राम हुआ उसमें बहुत से लोग शहीद हुए तब से आष्टी यह गाँव शहीद आष्टी से जाना गया ।[33]

[33] प्रा. रघुनाथ कडवे, 1942 चा चिमुर क्रांतिसंग्राम,पृष्ठ 45, 46

यावली संग्राम

यावली यह गाँव अमरावती जिल्हे में आता है। मुलता यह गाँव तुकडोजी की सही में कर्मभुमी है, दइस गाँव के सभी लोग तुकडोजी को बचपन से जानते थे इस गाँव में जीन युवकों ने स्वतंत्र्य आंदोलन में भाग लिया वह सभी तुकडोजी के साथ बड़े होनेवाले युवा थे। उन युवावो नें तुकडोजी की बचपन से देखा था तुकडोजी ने पुरे विदर्भ में जब क्रांति की शुरुआत की तो उसी प्रकार का यावली में भी संग्राम तुकडोजी के नेतृत्व में हुआ इस संग्राम में मिलेट्री का ब्रिटिशों ने इस्तीमाल किया आंदोलन इतनी तीव्र थी की उसका असर इस आंदोलन पर नहीं अुआ व इस आंदोलन में ऐसी कोनसी भी दुर्घटना नहीं हुई, यह विदर्भ का पहला आंदोलन है। जिसमें मिलिट्री होते हुए भी तुकडोजी के होने के कारण इस आंदोलन को खत्म करने के लिये ब्रिटिशो ने अमानीय कृत्य नहीं किया। इसे यह समझ में आता है की तुकडोजी का ब्रिटीश सरकार पर प्रभाव था।[34]

बेडोना और वरूड का सत्याग्रह

1942 में बेनोडा और वरूड का सत्याग्रह हुआ था बेडोना और वरूड यह गाँव अमरावती जिल्हे में आता है। इस संग्राम में तुकडोजी की भूमिका ऐसी थी की पुरे अमरावती जिल्हे में तुकडोजी गाँव गाँव जाकर लोगों को अपने भजनो से स्वातंत्र्यता के लिये जागृत किया करते थे इस बार तुकडोजी का यह आदेश था की सभी ब्रिटिश कार्यालयो में भारतीय झंडा लहराया जाये इसी कार्य को सभी लोग इस सत्याग्रह में करते थे। इस सत्याग्रह के प्रेरणा स्त्रोत तुकडोजी थे।

तुकडोजी की गिरफ्तारी

---

[34] प्रा. रघुनाथ कडवे, 1942 चा आष्टी स्वातंत्र्य संग्राम.पृष्ठ .47

1942 में तुकडोजी को मोझरी से गिरफ्तार किया गया उनको नागपुर के जेल में बंदी बनाया गया। उनके गिरफ्तारी के खिलाफ पुरे महाराष्ट्र के सभी अखबारो में ब्रिटीश शासन के इस कार्य की बड़ी निंदा हो रही थी। लोग स्वहस्ताक्षर लेकर परिपत्रक को गर्वनर को देते थे उससे यह समझ में आता है। उस समय महाराज की कितनी लोकप्रियता थी। तुकडोजी का जेल में क्रमांक 774 था महाराज जेल में भी चुप नहीं रहे, वह वाहा पर भी रोजाना भजन गाते थे उनके भजनो से कैदी और वहा पर रहने वाली ब्रिटीश लक्षकर भी। मंदमुक्त हो जाते थे ।[35]

चातुर्मास्य

[36] सन 1936 में मोजरी का चातुर्मास हुआ इस चातुर्मास के आखरी में संत सम्मलेन हुआ। उस समय तुकडोजी ने भारतीय संत को राष्ट्रीय कार्य के लिए आवाहन किया। देश सुधार का विचार प्रस्थापित किया । इस विचार का प्रसार सभी गावो में है। ऐसी विनती की उस समय मसुरकर महाराज, श्री.पांचलगावकर, पांगलकर भास्करेस्वरानंत आदि महान व्यक्ति उपस्थित थे और उस समय राष्ट्रधर्म के प्रचारक तैयार थे। 1937 में चातुर्मास तैयार हुआ। आगे सहमाहा का चातुर्मास शुरू हुआ और उस चातुर्मास के प्रशिक्षाण लेकर हजारो युवा राष्ट्रधर्म के प्रचारक बने।

---

[35] पुनसे नोरा, (2001),भारत साधू समाज, 27

[36] रूपराव वाघ,(2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य. पृष्ठ55,

तुकडोजी की दूरदृष्टि

तुकडोजी ने भविष्य के क्रांति को नजदीक से देखा था। सन 1938 में आष्टी में हजारो स्वयं सेवको की, कवायत होती थी। 1949 में कार्य दृष्टि से भव्य चतुर्मासास का समापन हुआ। 1940 में अकोला में शीख परिषद हुई। 1941 में भाम्भोरा में व्यायाम वर्ग का समापन हुआ। चमुरचतुर्मास में तलवारबाजी का प्रशिक्षाण 1941 में हजारो स्वयम सेवको को दिया गया। 1942 में और जन में ज्ञान मंदीर का निर्माण हुआ। इस समय तुकडोंजीने संबोधीत करते हुए कहा की हम हिंसक नहीं अहिंसा के पुजारी है। लेकिन अन्याय का प्रतिकार करने के लिये हम हमेंशा तैयार हरना चाहिए जो व्यक्ती सही में योध्दा होता है। और दुसरा युदध होता है। इन सभी प्रशिक्षाणो को स्वातंत्र्य आंदोलन में बडा योगदान रहा। [37]

स्वातंत्र्य क्रांतिप्रांतजन्य

भारत में गुलामी का दर्शन महाराज के भजनो में होता था। और उसी काकर्य से बालक वीरो की जागरूकता करने की शुरूआत हुई। महाराज की प्रेरणा से आष्टी, चिमुर, यावलरी, बनोडा इत्यादी जगायो पर लोगों में नवज्वाला प्रस्थापित हुई। 1939 में जागतीक विश्वयुध्द हुआ उसका भारतीय लोगों को उसका बडा दुष्परिणाम हुआ 1942 बडा विक्रार रूप भारतीयों ने धारण किया । चले जाओ आंदोलन में देश के बड़े नेता जेल में चले गये। बचे हुए कॉंग्रेस के कार्यकर्ता की तुकडोजी पर केंद्रीत हुई। सब नेता महारज को मिलने लगे और महाराज के मार्गदर्शन में कार्य करने लगे। तुकडोजी का कार्यनिशप होने की वजह से महाराज की तरफ आने लगे। तुकडोजी लोगों को वही कहते थे जीससे देश का स्वाभीमान गौरोवाचीत हो। पिछे न हटकर गुलामी की हटान यही तुमारी भक्ती है। तुकडोजी यैसा लोगों को कहते है।[38]

---

[37]

[38] सुधा,(02नोव्हेंबर2000), श्री. सिंधु के लहरे(पुर्वाध), पृष्ठ20, 21

विश्वशांति सप्ताह

जेल से निककलने के बाद तुकडोजी को जनता में डर दिखाई दिया। इस डर के वजह से उनको क्रांति का नाम भी सुनाही नहीं देता था। इसलिए लोगों का शांति और सहारा देने के लिए ऊन्होने विश्वशांति सप्ताहा का आयोजन किया। युध्द की क्रांति और भेदभाई और डर इत्यादी से त्रस्त भारतीय जनता ने उस आयोजन सप्ताहा का दिल से स्वागत किया। यहा सप्ताह भारत तमें ही नहीं तो विदेशी मुलकों में भी हुआ। [39]

जनवरी ते धर्म के माध्यम से संपुर्ण भारत में मनाया गया। जहा पर बंजर गाँव रहे वहा भी सप्ताह के गुंजी। दि 24 शाम 7.30 बजे के 3 मिनीट प्रार्थना सभा धर्म के लोको ने प्रार्थना शांति से की। रेल भी एक मीनीट के लिए रूक गयी इस कार्य के लिय सरकार से भी साध्यता की जनता ने शांतता प्रस्थापित करनी चाहिए इसलिए सरकार ने इस सप्ताहाका स्वागत किया। इस सटतात का कार्यालय नागपुर में गोस्वामी महेशपुरी बंले में खोफा गया। यह सप्ताह से एक महानकार्य हुआ। राष्ट्रीय नेता बंध्दीवास में थे। ऐसी दुर्मिळ परिस्थिती में तुकडोजी ने लोगों की एकत्रित लाया। इस सप्ताह का आयोजन देखने अमरावती से ड़ी.सी. मेंल्डम को आश्चर्य हुआ। वो गाड़ी में बैठकर धुम रहे थे तथी उनके को इस बात महसुस हुई। मानवतावादी दृष्टिकोण लोगों के आगें रखने के लिए अथवा करने के लिए दी 4 1943 में वर्ष प्रतिदीन के शुभमुहर्त पर श्री.गुरूदेव मासिक का और श्री.गुरूदेव सेवका यह सप्ताह का जन्म हुआ।[40]

---

[39] पुनसे नोरा, (5 नोव्हेंबर 2001),भारत साधू समाज. पृष्ठ27, 28

[40] सुधा,(02नोव्हेंबर2000), श्री. सिंधु के लहरे, 20

श्री गुरूदेव सेवा मंडल

वहींमहाराजजी जेल से याने जिसे वे श्रीकृष्ण मन्दिर कहते थे, वहां से दिसम्बर माह के प्रथम सप्ताह में रिहा हुए। उन्हें वर्धा और चंद्रपुर जिले में जाना कानून से मना किया गा था। बाहर आते ही श्रीक्षेत्र वरखेड़ आये और उनकी माताजी की पुण्यतिथी महोत्सव में शामिल हुए। अपनी संघटना का ब्यौरा लिया, कार्यकर्ताओं की पूछताछ की और 17 जनवरी से 24 जनवरी 1943 तक 'विश्वशांति नामसप्ताह' का आयोजन किया। सारे भारतीय नेतागन जेल में बन्द थे, ऐसे समय यह संत आगे आया और नाम सप्ताह के माध्यम से जनजागरण की प्रक्रिया जारी रखी, देहात -देहात गये, लोगों की समझाया, अपने कर्तव्य की याद दिलायी, भगवान का नाम गाते-गाते देश का काम करने की सलाह दी। 1943 के अकोला चातुर्मास्य में करीब करीब 63 दिन अध्यात्मिक प्रवचन किए। इसी काल में सभी धर्म का समन्वयय हो इस हेतु सामुदायिकक प्रर्थानाष्ट्क की रचना की। अपने संघटन का 'श्रीगुरूदेव सेवामंडल' ऐसा नामाभियान के अपने अनुयायियोंको 'विश्व स्नेहका ध्यान धरे। सब का सब सम्मान करके' इस दिशा में कार्य करने का उपदेश किया। [41]

1944 में पूज्य बापूजीके सेवाग्राम आश्रम में सामुदायिक प्रार्थना का भव्य आयोजन की गया। इस प्रार्थना में भाषण करते हुए पूज्य बापू ने कहा और उसका काफी असर मुझ पर पड़ा। लेकिन हिंदुस्तान में लौट आने के बाद सामुदायिकता का दर्शक हुआ और उसका काफी असर मुझपर पड़ा। लेकिन हिंदुस्तान में लौट आने के बाद सामुदायिक उपासनाका ठीक-ठिक उपक्रम कहीं भी मुझे नजर नहीं आया, आप लोग सामुदायिक प्रार्थना करें और उसकका स्वरूप व्यापक होता रहे, यही मैं चाहता हूँ..... आप इसी तरह तुकड़यांजी महाराज के इस कार्य को आगे बढ़ाते रहें यही मेंरी इच्छा है'' बापू के इस भाषण से तुकड़ोंजी की विचारधारा तथा कार्य कितना महान था यह स्पष्ट होता है। समय

---

[41] (19)डॉअशोक बाचुलकर,(02नोव्हेंबर2014),ग्रामगिता, पृष्ठ40, 41

मिलते ही महाराज जी ने मोझरी के सेवाश्रम की रचना की। अनेक विभाग शुरू किए। भजन-भाषण के साथ-साथ विधायक कार्यक्रम का अमल अपने आश्रममें रने लगे। खादी से लेकर तेल घाणी तक, भजन से लेककर गोपाल न तक, कई विधायक तथा रचनात्मक कार्यक्रम आश्रम परिसर में देखते देखते प्रभावता तथा कुशलता से शुरू हुए। वहींमहाराजजी का यह आश्रम सभी धर्म पंथ संप्रदायों के लिये खुला था।[42]

स्वराज्य मंगल प्रवेश

महात्मा गांधीजी जेल के छुटने के बाद हजारो सेवको ने सेवाग्राम आश्रम में बापु के उपस्थिती में और उसमें गांधी की भाषण हुआ बापु ने तुकडोजी के काकर्यी मुक्तकंट से प्रशंसा को सन 1943 में रचे हुए भजन में तुकडोजी गा रहे थे उठो दिन निकला नये, इ.स. 1945 में गांधीजी जेल से छुट और उनके पीटे पिदे इतर बंदिवासी भी बाहर निकले, आष्टी चिमुर के प्रेमी भक्त भी मुक्त हो गये और उनके पास मिलने के लिए गये।

नगर आखाडा संघटन

आगे पाकिस्तानी विचारधारा देश को सतरहे थे। इस समय लोगों में जागृती रहे इस उद्देश्य से तुकडोजीने शक्ती साधना पर बडा जोर दिया। राष्ट्रभाव से प्रेरणा लेकर नागपुर तक आयी आकडो आकडो में वयमस्य था और भुलकर महाराज के कहने पर दि. 21.1.1947 को हजारो भक्त और उठा शला एक होर नगर आखाडा संघटन स्थापन किया। और नागपुर में होने वाला रक्तपात खत्म किया। व्यामी वृत्ती को नष्ट करने का कार्य नियमित रूप से चालू रहा।

---

[42] पुनसे नोरा, (5 नोव्हेंबर 2001),भारत साधू समाज. पृष्ठ27

हरिजन सेवा

स्वतंत्र्यता की शुरुआत में हरीजन को मंदिर में प्रवेश नहीं था। महाराज ने उस समय पंढरपुर में विठ्ठल के मंदिर मेंदर्शनकिया नहीं एक और ढ़ाई साल बाद सानेगुरूजी ने उपोषण चालु किया था। महाराज ने हरीजन को विठ्ठल मंदिर खुला होने चाहिए इस लिये पांच लाख लोगों की लेखी सहमती लेकर प्रस्तुत किया ओर मंदिर प्रवेश प्राप्त किया। नागपुर में 14.2.1947 को संक्रांतिके दिन हरिजन दिन मनाया गया और वहापर मंदिर प्रवेश की स्थापना की गयी प्रथमता उनहोंने मंदिर खुला किया और तुमडोजी में रामटेक का राम मंदिर भी सन 11.10.1947 को हरिजन को लिये खुला किया बहुत से गोव में सेवा मंडल की स्थापना की उनके प्रयत्न से सार्वजनिक मंदिर खुले सार्वजनिक स्थल हरिजन को लिये खुले किए तुकडोजी ने शुहबुत समानता की हमेंशा बात की है। और खान-पान इत्यादी शुरू किए। इसी प्रकार बलीदान मंदिर का भी कार्य तुकडोजी में शुरू किया असंख्य बेजबान पशु पक्षी यो के प्राण बचाये।[43]

स्त्री समानता

स्त्री सक्षमिकरन विछवाओ की दैणीय दशा दुर करने लिये पड़ी परंपरा हटाने के लिये शुरुआत से महिला संगठनों महाराज का संघटन किया। उनका कहना था की बहुत सी विधवा स्त्रियों का जीवन यह शोषित होता था। उसी समय हमारा देश आझाद हुआ था। उसी समय तुकडोजी ने उस स्वतंत्र का विकास होने के लिए स्त्रियों और पुरुषों का योगदान समान रहे इस लिये तुकडोजीने स्त्री पुरुष समानता के लिये अपने भजन और कीर्तनोसे जनजागृती की। तुकडोजी कहते थे की विकसित देश ओ है जो स्त्री पुरुष को समान समजता है। ऐसा तुकडोजीका निश्चय था।[44]

---

[43]रूपराव वाघ,(2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य. पृष्ठ45

[44] अशोक बाचुलकर,(02नोव्हेंबर2014),ग्रामगिता, पृष्ठ40, 41

समाज शिक्षा

यवतमाळ जिल्हे के आखिर में महाराज सदर के लिये प्रस्थान किया। निजाम शासक पर 1947 विजय प्राप्त करने के बाद वहाके डरावने राज्य का दौरा करके उस राज्य का शांतता का प्रयत्न तुकडोजी ने किया। इस उद्देश्य से सरहद वे बहुद से योग और व्याखान के कार्यक्रम किए। आगे मध्यप्रदेश सरकार ने तुकडोजी से प्रेरणा लेकर प्रौढ शिक्षाण की योजना शुरू की उस योजना को यशस्वी करने के लिये गुरूदेव सेवा मंडळ का बडा योगदान था। क्योंकी श्री गुरूदेव सेवा मंडळ का यह कार्य शुरुआत से शुरू था। उस समय बहुत से गाँव सेवा मंडळ के प्रयत्न से साक्षर हुए और उस गाँव सेवा मंडळ के प्रयत्न से साक्षर हुए और उस गाँव को तुकडोजी में आदर्श गाँव बनाया। इसकी आपको हजारो गोंव में उपलब्ध का इतिहास मिलेगा।[45]

विधायक कार्य

स्वतंत्रता की सुबह होने जा रही थी उसी संधिकाल में संत तुकड़ोंजी महाराज ने विधायक कार्य से स्वराज्य का परिवर्तन सुराज्य में हो इस उद्देश्य से अपनी सारी आत्मशक्ती प्रत्यक्ष काम के लिये प्रदान की। गाँव-गाँव उद्योग मंन्दिर, साक्षरता अभियान, गोरक्षण, बलिदान बन्दी, मन्दिर खोलो कार्यक्रम, आखाड़ा संघटन, कुष्ठरोग, निर्मूलन आदि कार्यक्रम शुरू किए। अपना श्रीगुरूदेव सेवा मंडल केवल भजन-प्रार्थना की शिक्षा नहीं देता, यह मंडल सर्वांग-उन्नतिके आदर्श मार्गा दिग्दर्शन भी करता है यह सारी दुनिया को दिखा दिया। वहीं महाराजजी की आध्यात्मिक भूमिका बहुत ही उच्चे दर्जे की थी परन्तु जब तक 'अध्यात्म और विज्ञान का संगम न होगा तबतक मानव उन्नत नहीं हो

---

[45] अमोल कडवे,(2002),राष्ट्रसंताची जपान मधिल भाशने , पृष्ठ12,11

सकता' यह उनकी राय थी। भगवान का पता अब बदल गया है वह मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघरों में बैठा नहीं है। वह है दीन दलितों की कुटियां में । अब गिरीकदरों में जा कर तपस्या करने का समय नहीं है, अस सारे संत महंतों ने सेवा का मार्ग अपनाना चाहिए । इस विचारधारासे वहीं महाराजजी ने तीर्थ स्थानों में सन्नूत सम्मेलन का आयोजन किया ओर सभी संतमहंतो को अपना कर्तव्य समझाया। भगवान की प्रसन्नता चाहते हो तो भगवान का उपदेश ध्यान में रखकर कार्य करना यह समय की मांग है। उन्होंने तरह-तरह कके भजन सुनाककर संत महंतो-पुराणिको को समझाया, चेतना दी। [46]

15 अगस्त 1947 के दिन भारत स्वतंत्र हुआ । महाराजजी ने स्वराज्य का परिवर्तन सुराःज्य में करने का व्रत लिया। जनता को शहींदों की याद दिलायी और उनके बलिदानसे यह स्वतंत्रता सूरज निकला है। महाराजजी अपनी श्रीगुरूदेव की चालीस हजार शाखाओं की माध्यमसे विधायक कार्यक्रम घर-घर पहुंचाने का कार्य कर रहे थे, उसी काल में खबर मिली की महात्माजी की किसी विरोधी तत्वों ने दिल्ली के बिर्ला मंदिरमें हत्या कर दी। खबर सुनते ही थोंड़ी देर के लिये महाराजजी के होश उड़ गए। उनकी कलम लिखने लगीर 'दयामयी अवतार शांतिका भारतसे खोगया । अंधेरा जिधर उधर छागया'। निराशता कुछ क्षण के लिये उनके चेहरे पर दिखने लगी । अहिंसा का मसीहा, स्वतंत्रता प्रदान करनेवाला महात्मा 'हे राम' कहते कहते चल बसा परंतु यह सारा समाज, सारा देश तो है,, उसके लिये कार्यरत रहना अनावश्यक है। महाराज जी श्रध्दांजली सभाओं में गये, जाकर सबको समझाया, जाति-जाति में झगड़े न हों इसीलिये शांति का सन्देश दिया । वे राजधानी दिल्ली में गये। नेताओं से मिले, चर्चा की, परिस्थिती को जानकर सलाह भी दी। देशमें भाई-चारे का वातावरण बनाने का प्रयास किया। [47]

---

[46] प्रा. रघुनाथ कडवे, राष्ट्रसंताची जन्मभूमी, पृष्ठ55, 66

[47] डॉ. भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ. पृष्ठ 47, 49

भुदान अभियान

भुमिदान कर श्रमदान यह पुककार तुकडोजी में प्रस्थापित की यह लकीर तुकडोजी में गाव-गाँव में जाकर अपने भजनों से देने की कोशिश की । तुकडोजीके भजन सुनने के लिये हजारो लोक उपस्थित रहते थे । आखिर में उन्होंने भुदान यज्ञ नाम से एक भजना वली प्रकाशित कर दी। कांदेगाँव के जमीनदार भुबरे उनसे मुलाकात करकर भुदान करने के लिये पराभुत किया और पारवेकर ने माराज पर अथिम आस्ता घेने के काकरन भुमी दान कर दी। यवतमाळ जिल्हे में तुमडासेजी के नेतृत्व में जितने भी भुदान हुए उसके किससे आश्यर्चवान है। उसके बाद पंड़ीत जवाहरलाल नेहरू को यवतमाळ में गुरूदेव सेवा मंडळ के अंतर्गत भूदान कार्यक्रम में उनको तुकडोजी में बुलाया। विनोभाजी कहते थे। भूदान अभियान में उन्हे कोई भी समस्या हो तो उस समस्या का निराकरन तुकडोजी करके देते थे । उसके बाद मध्यप्रदेश, बिहार, उत्तरप्रदेश इन राज्यो में भी भूदान अभियान में महाराज का सक्रिय योगदान था। एक बार अकोला जिल्हे में एक ही बैठक में महाराज की नेतृत्व में दो हजार एककर जमीर भुदान में मिली इस कार्य के कारण विनोबा जी ने तुकडोजी के प्रशंसा में उन्होंने कहा था की तुकडोजी में रेत से ही तेल निकाला है। [48]

भूमिदान यज्ञ

1953 में आचार्य विनोबाजीने 'भूमिदान' की पुकार की। जिसके पास खेती नहीं है, उसे जमीनदारों ने अपने जमीन का छटवा हिस्सा स्वयं ख़ुशी से देना चाहिए, ऐसी पदयात्रा करके मांग की। राष्ट्रसंतजी ने इस भूमिदान यज्ञ में सक्रिय हिस्सा लिया ओर विदर्भ, बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, का

---

[48] भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ. 37

दौरा करके हजारो एकड़ जमीन गरीबोंको दी गयी । जिसके साथ-साथ श्रमदान के माध्यम से ग्राम-सुधार का कार्य किया। जिसी राष्ट्रसंतने स्वयं हाथ में टिकास लेकर रास्ते बनाये, सिर पर टोकना लेकर गिटटी मुरूम फेके, खाद के खडड़े तैयार किए, अपनी हाथों से संडास साफ किए। वहींराष्ट्रसंतजी ने इसके साथ साथ समयदान की पुकार की। ग्रामसुधार कार्यक्रम के लिये बड़े बड़े महात्माओं से समय दान की मांग की। महाराजजी के आवाज पर कीतने ही नेता-धुरीन इस काम के लिये दौड आये। देहातियों में जनजागरण कर साक्षरता, व्यायाम, संगीतककला तथा प्रबोधन का अभियान चलाया। महाराजजी का भजनर तो चलता ही था पर भोजन की व्यवस्था करने भी उन्होंने हाथ बटवायें । राष्ट्रसंतजी का ध्यान जीवन के सभी अंगो पर था, स्वयं उन्हें कीतने ही कलाओं का ज्ञान था । [49]

समाज जागृती

स्वतंत्रता के बाद भारत ने अस्पृश्यता और अंधश्रध्दा, धार्मिक विषमता, जातीभेद ऐसे बहुत सी समस्या थी उन समस्या का निराकरण होना अत्यंत आवश्यक था। तभी ये देश एक रह सकता है। यह तुकडोजी का विश्वास था। इसलीये तुकडोजी किसी धर्म से श्रेष्ठ विश्व धर्म को मानते थे। तुकडोजी कहते थे की इंसान का एक ही धर्म होना चाहिए वह है विश्व धर्म और राष्ट्रधर्म आजादी के बाद तुकडोजी ने इसके लिये अपने भजनो से और अपने कार्य से समाज में जनजागृती प्रस्थापित करने का जिंदगीभर प्रयास किया। [50]

---

[49] भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ. 37

[50] डॉ. भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ. 23,24,25

ग्रामगीता का योगदान

तुकडोजी की ग्रामगीता ग्रामजीवन की विचारधारा है ग्रामीण जीवन को मानसिक एवं भौतिक स्तर पर उच्चीत दिशा देने के उद्देश्य से ग्रामगीता की निर्मिती हुई है। ग्रामगीता महात्मा गांधी जी का देहात की ओर चलो और संत गाडगे महाराज का आदयात्मीक सामाजिक प्रबोधन इन दोनो के सुंदर समन्वय से ग्रामगीता का जन्म हुआ है। इस बात की बेहत ख़ुशी है की, कर्मयोगी गीताचार्य तुकाराम दादाजी में सार्थ ग्रामगीता का सृजन किया उसके गदय स्वरूप के उपलक्ष में मेंरी हार्दिक शुभकामनाये मध्य ग्रामगीता शीर्षक में समाज जागृती एंव जीवन संचित का मुल्य सुरक्षित है। ग्रामगीता का अर्थ हदय पर अंकीत हो इसके लिये यह भाषा एवं रचना है पदय से गदय में अवत्तीर्ण प्रस्तुत ग्रंथ का पठन बेहत प्रभावी साबित होगा।

आज सामाजिक, राजनितीक, आध्यात्मीक, आर्थिक, औदयोगिक आदि क्षेत्रों में स्वार्थ बढ गया है। परिना मतः समाज को सही दिशा नहीं मिल रही है। ऐसी स्थिती में गदय ग्रामगीता पुस्तक से युवा पीढ़ी में सामाजिक सलगता निर्माण होगी अध्यावत टेकरी पर गीताचार्य तुकाराम दादा के प्रयत्न से ग्रामगीता विश्व विदयापीठ की स्थापना हुई है। इससे शिक्षा के सामाजिक सेवा का परिना म प्राप्त हो गया है। ग्रामगीता विश्वविदयापीठ अंतर्गत विविध परिक्षाओं का आयोजन करने का छात्रों में जीवन मुल्य बोध जहा रहा है। निच्छय ही यह आनंददायी बात है। [51]

'गदय ग्रामगीता' ग्रंथ में जीवना र्थ समजा दिया जाता है। जो वर्तमान छात्रों एवं पीढ़ी के लिये दिशा दर्शक साबीत होगा। इस बात की विशेष ख़ुशी है की इससे छात्रों में पठन-पाठन की प्रवृत्ती बढेंगी और राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज के अनमोल विचार युवा पीढ़ी में बाटे जायेगी। इसमें परिक्षा एवं अध्ययन

[51] सुधा,(02नोव्हेंबर2000), श्री. सिंधु के लहरे, 10

का उचित समन्वय है। मुझे विश्वास है की प्रतियोगीता परिक्षा में प्रस्तुत पाठयक्रम का समावेश होगा और भावी पीढ़ी ओको तब तक से सह विचार पहुंचेगे और उनके आचरन प्रत्यक्ष दिखेगे।

मा.लक्ष्मन दादा नारखे्रड़े ने हद्दत में गदय ग्रामगीता ग्रंथ का अचुक उद्देश्य लिया है की ग्रामगीता का दर्शन आध्यात्मिक प्रवृत्ती द्वारा आत्मबल पर साकार हो । तुकाराम दादा गीताचार्य में असीम समर्पित भावना से किया हुआ कार्य वर्तमान पीढी के लिये प्रेरक है । प्रस्तुत ग्रंथ के लिए सुबोध दादा की प्रस्तावना यानी सुविचारो का अलंकार है। ग्रामगीता ग्रंथ मात्र साधु-संत, धार्मिक लोगों के लिये नहीं है, बल्कि समाज के शुद्धिकरन का आंदोलन चला रहे समाज चिंतको की सेवागाथा है।

पदय ग्रामगीता ग्रंथ की रचना गदयमंच हो गई है। अंतः हम कह सकते है की जो अपरक्षित था, व इससे साकार होगा। य ग्रंथ ग्रामगीता प्रणित जीवन शिक्षाण परिक्षा की दृष्टि से अत्यंत उपयुक्त समझना चाहिए।

मा.श्री.लक्ष्मन नारखेड़े जी का में विशेष कायल हूँ। उन्होने तुकडोजी महाराज की विचारधारा प्रत्यक्ष कृती में लाकर हमारे सामने एक नवीन आदर्श रखा है। पहले किया, फिर बताया' ऐसे इन दोनो महान संतो एवं समाजसेवको के प्रती मेरे मन में अपार श्रध्दा है। अडयाळ टेकरी के कार्य का परिसरस्पर्श मुझे हुआ। वहां के कार्य से मै प्रभावित हुआ। तुकाराम के कार्य के सामने मैं नतमस्तक हुआ । दुनिया के कल्याण के लिये संतो की विभुती यही विचारधारा गदय ग्रामगीता के रूप में जनसामान्य के समझ आ रही है । सचमुच यह हमारा सौभाग्य है । [52]

[52] रूपराव वाघ, (1999), 15

अध्याय 3

तुकडोजी का ग्राम निर्माणपर चिंतनवादी दृष्टिकोण

जनशक्ति की महिमा

लोगों के मन में आतंक हो तो उनमें से अच्छे के लिए प्रयासरत, सेवा करनेवाले, सत्य के अगुआ ऐसे लोगों को एकत्र करके सक्रिय संगठन बनाया जाए। यह समय लोकतंत्र का है, संपूर्ण शक्ति लोगों के अधीन है। अंतः ध्यान में रखिए की जनशक्ति के निश्चय से साम्राज्य को भी झुकाया जा सकता है। संगठन के बल पर घास की रस्सी हाथी को बांध देती है, चींटियाँ सा को त्रस्त कर देती हैं तथा जंगली कुत्तों का संगठन बाघ-सिंह को भी फाड खाता है। जिस प्रकार एक-एक बूंद मिलकर भव्य नदियाँ और समंदर बनते हैं, उसी प्रकार संगठन से कुछ भी हो सकता है। पूरा गाँव नंदनवन बन सकता है। सज्जनों का संगठित होना ही गाँव सुधार का मूल मंत्र है। ग्रामराज्य निर्माण करने की ताकत संगठन में ही है। जो गाँव कर सकता है, वह कोई राजा भी नहीं कर सकेगा। सुजान लोगों ने कहा है की अधिकारियों न जिसकी तरफ ध्यान नहीं दिया उसे सुधारने तथा अधिकारियों को सीधा करने का काम भी गाँव ही करेगा। लोगों के सुख-दुख सुनने के लिए, उचित न्याय करके अन्याय का निर्मूलन करने तथा गाँव की रक्षा करने के लिए गाँव में सशक्त संगठन चाहिए। गाँव के पवित्र सेवक समय पड़ने पर सैनिक की भूमिका निभाएंगे, तभी गाँव में विघ्न-बाधाएं नहीं रहेगी। इसलिए गाँव ईमानदार, त्यागी, निर्भय और षीलवान लोगों को नियुक्त करें।[53]

---

[53] सुदाम सावरकर, जीवनयोगी-खंड-5, पृष्ठ17,18

गाँव में एकाध अपराध होने पर सभी को उसकी सूचना दी जाए। सहयोग के लिए सभी तत्काल एकत्र आकर मिलकर बिगडा हुआ कार्य दुरूस्त करे। सोने का ढोंग करने वालों को हम चिकोटी काटके जगाते हैं, उसी प्रकार अपराधी को समझाइए। अपराध सिध्द होने पर भी अगर वह सुनता नहीं है, तो गाँव उसे दंडित करे। जैसे कोयला रगडने पर काला ही रहता है और आग में डालने पर लाल होकर चमकता है। उसी प्रकार ऐसे गाँवद्रोही लोगों का बहिष्कार करे और असहयोग द्वारा उनके जीवनाधार तोड दिए जाए। नाक दबाने पर वे मुंह खोलेगे और फिर सुधर जाएंगे। सभी मिलकर ऐसे गाँव बिगाडने वालों की खोज-बीन करके उन्हें हैरान कर दे। गाँव के अधिकारीयों की भी वह सुनता नहीं है, तो उसे गाँव से निकाल दिया जाए। गलत बातों का बहिष्कार करके पहले से ही अच्छी बातों को बढ़ावा दिया जाए। बुरी बातो को गाँव में बिल्कुल स्थान न दे। इसके लिए ग्रामवासी प्राणों की बाजी लगाकर प्रयत्न एवं मेंहनत करे। तभी गाँव स्वर्ग जैसा बनेगा और वहां सत्ताधीशों की बिल्कुल आवश्यकता नहीं रहेगी। जिस गाँव के लोग इस प्रकार सेवा के लिए जागृत एवं सजग रहेंगे, वह गाँव न्याय का भंडार बनेगा। सही अर्थों में गाँव के लोग भाग्यवान होंगे। अन्यथा उनके नसीब में होगा, गाँव के गुंडो का खौफ।

ग्रामसेना के कर्तव्य

गाँव में सज्जनों की न्याय-सेना (ग्राम संरक्षण दल) स्थापित कर गाँव से शराब, गांजा, भांग, अफसोस, जुआ, वेश्या व्यवसाय, धिंगा-मुष्ती समाप्त करे। गाँव में अच्छी बातों को बढ़ावा दिया जाए। गाँव को नुकसान पहूँचानेवाली अनिष्ट प्रथाएं बंद कर दी जाए। अपने शौक के खातिर बैलों को पैनी चीज चुभाकर लथपथ करने वाले किसानों की सभी आदतें समाप्त कर दी जाए। भगवान के नाम पर पशुओं की बलि चढ़ाने की प्रथा, गाँव में भ्रमिष्ट विचार एवं व्रत-उपासना सीखाकर साधुगिरी के नाम पर लोगों को लूटनेवाले गुरूघंटाल आदि सब बंद कर दिए जाए।

गाँव सेवा में विघ्न आने पर पहले उसे दूर करे । आवश्यकता पड़ने पर जगह जमीन देकर संकट की घड़ी में एक-दूसरे को मदद करे और सभी से सेवा ले । सभी का सहयोग न मिल रहा हो, तो खुद जरूरतमंदों को निष्कपट मन से यथासंभव सहयोग दे। उनके बच्चों के शादी -ब्याह में भी जरूर मदद करे । ताकी उनके माता-पिता पर शादी का बोझ ना पड़े । सभी थोड़ी-थोड़ी सहायता करके शादी का इंतजाम करा दे। भोजन का प्रबंध भी लोक सहयोग से करे। [54] भोजन से लेकर मंडप बनाने के लिए थोड़ी-थोड़ी सामग्री वर-वधु को दे देने से सहयोग से ही विवाह समारोह संपन्न हो जाएगा, वैसे - वैसे गाँव विकसित होता जाएगा। ग्रामवासियों पर कोई संकट नहीं आएगा। ऐसी सेवा वृत्ति जीवन में अपनाने से गाँव में किसी भी चीज की कमी महसूस नहीं होगी। बाबूजी इसके सेवकों का एक स्वतंत्र् विभाग हो । आग लगना, कुएं में गिरना, हैजा की महामारी, बेहोश होना आदि किसी भी संकट में गाँव के युवा अपना काम धंदा छोडकर मदद के लिए सदैव तत्पर रहे। ऐसी जागृत ग्रामसेना की व्यवस्था जिस गाँव में होगी, वह गाँव नंदनवन होगा। ऐसे संगठनों के कारण गाँव को दिव्य वैभव और ग्रामसुराज्य के सुख का संतोष प्राप्त होगा।

ग्रामसफाई की परंपरा और रामधून की भूमिका

गाँव की पवित्रता एवं स्वच्छता के लिए जगह-जगह पर भगवान की मूतियाँ रखी गई, परंतू वही कबाडाखाना बन गए । अनेक पंथ-संप्रदायों में गाँव प्रदक्षिना की प्रथा थी, परंतू वह भी समाप्त हो गई । बची है, तो केवल दरिद्रता । दिंड़ी-जुलूसों तथ दहीकाला (दही, चिउडा आदि मिलाकर बनाया हुआ प्रसाद) के उत्सवों में नाच-गाना, तमाशा घुस गया। अतः उसका तत्त्व समाप्त हो गया। गाँव-गाँव में सर्वत्र मलिनता बढ गई । टूटे-फूटे मंजीरे, वीना , मृदंग सब भजन के लिए घर-घर में निमंत्रित करते हैं। बिना ताल-स्वर के शादी में बैंडवाले बजाते हैं, वैसे ही बजाकर ये कार्यक्रम निपटाते

[54] रमेश गुप्ता (आष्टीचा स्वातंत्र्य संग्राम 1942) बंडखोर खेडयांची गोश्ट.22, 23

हैं। शंख, घंटियाँ, नगाड़े की बेसूरी आवाज से कोहराम मच जाता है। इससे गाँव की सभी सभाएं-कीर्तनबिगड़ गए। इस प्रकार हमने खुद ही में सुधार नहीं किए, तो भगवान को हम पर कैसे दया आएगी। [55]

गाँव में भगवान की पालकी निकाली जाती है। उस वक्त लोगों के अनुशासनहीन चलने से तथा अत्यंत जल्दबाजी एवं भीड के कारण लोग उनकी तरफ ऐसे देखते हैं जैसे तमाशा देख रहे हो। किसी को कुछ मालूम नहीं होता है। चलना कैसे है, यह मालूम न होने के कारण लोग आगे बढ़ने के लिए उधम मचाते हैं । इन्सान की तरह चलना भूलकर वे जानवर की तरह झगड़ने लगते हैं । आगे- पीछे सतत धक्के और ठेंस लगने से ऊँगलियों को चूर कर देनेवाली बिना किसी काम की प्रदक्षिना गाँव की गंदगी साफ नहीं कर सकेगी । प्रदक्षिना की यह दुर्गति बंद करके पुनः ग्राम निर्माण के लिए सेवामंडल के माध्यम से रामधून का कार्यक्रम आरंभ किया। रामधून कोई नया उपक्रम नहीं है, बल्कि पहले की ही ग्रामशुद्धि हेतु की गई प्रदक्षिना का यह रूप है। गाँव को ही अपना शरीर मानकर उसे पवित्र तथा प्रसन्न रखने के कार्य का नियोजन इस रामधून में है।**56** [56] जैसे हम स्नान करते हैं, वैसे ही गाँव को भी स्वच्छ एवं सुंदर बनाने के लिए सभी मेंहनत करे। सभी मिलकर गाँव के विकास के हकदार बने। सिर्फ स्वतः स्वच्छ रहना और अपने आसपास का वातावरण दूषित रखना इससे अपना शरीर एवं मन मलीन ही होगा। हमें सुख तथा आनंद प्राप्त नहीं होगा। इसलिए पहले अपना दूकान-मकान, रास्तें, नालियाँ, चैक साफ करके बाद में रामधून की फेरी निकाले। किसी के भी घर में गंदगी न रखे। इस सफाई के लिए गाँव के सेवाभावी लोगों की मदद ली जाए। सब मिलकर नाले, मोरियाँ, रास्तें साफ करे। वह गंदगी इधर-उधर न फेंककर गाँव के बाहर दूर फेंक दे। गाँव के बाहर खुले में खाद के लिए गड्ढे खोदकर, उनमें यह गंदगी जानवरों का मलमूत्र एकत्र किया जाए।

---

[55] हरीभाऊ वेलुरकर,(2014),साधु सिंध की लहरे, श्री गुरूदेव सेवा,33

[56] भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ, 37

गाँव की दरिद्रता के कारण और स्वावलंबन का महत्त्व

जहाँ हाथ पहूँचेंगे वहां लक्ष्मी आएगी । ऐसी योजना द्वारा अपने गाँव को शहर से भी सुंदर बनाने का सूत्र गाँव के लोग भूल गए हैं । परिना मतः आलस्य, दुख-दैन्य एवं दरिद्रता आ गई। शहर में आए यंत्र आदि के कारण गाँव के उद्योग नष्ट हो गए और सभी कुशल लोग उद्योग के लिए शहरों में चले गए। गाँव के लोगों की बुद्धि, समृद्धि, श्रमशक्ति तथा हस्तकला भी शहर में चली गई । गाँव में बची मात्र खेती , वो भी जैसे-तैसे लोग करते हैं । परंतु विशेष शक्ति, बुद्धि, संपत्ति का ओघ मात्र शहर की तरफ ही है। उच्च शिक्षित एवं सामथ्र्यशाली लोग नौकरी के लिए दर-दर की ठोकरें खाते घूमते हैं। ऐसी स्थिती में गाँव के उद्योगधंधों और खेती की उन्नति कैसे होगी? ध्यान दिया जाए, तो छोटे उद्योग और खेती ही सभी का पोषण करेगी। इससे गाँव में कोई भी बेरोजगार नहीं रहेगा। **57**[57] जिस पर गुजारा किया जा सकता है, वह कच्चा माल गाँव में पक्का न बनने के कारण हमारे गाँव की यह दुर्गति हो गई है । कच्चे माल का कोई मोल नहीं है, परंतु वही माल पक्का बनने पर चौगुना दाम देकर खरीदना पड़ता है । ऐसी स्थिती में ग्रामवासी सुखी कैसे होंगे? फसले लेकर भी उन्हें भूखे पेट रहना पड़ता है । अतः शहरों पर निर्भर न रहकर, आलस्य छोडकर अपनी सामथ्र्य, बुद्धि, कला एवं ज्ञान का उपयोग गाँव में ही करके सर्वत्र स्वावलंबन बढ़ाना चाहिए । यही ग्रामवासियों के सख का प्रमुख साधन है । गाँव-गाँव में, घर-घर में कोई एकाध स्वावलंबी उद्योग- कामधंधा शुरू करे । साथ ही अपना काम करते हुए अन्यों को भी निस्वार्थ भाव से मदद करे । घर के बाल बच्चों सहित परिश्रम कर खेती और कामधंधा करके पूरे परिवार सहित सुखी होवे।

'हाथों को काम और मुँह में राम'? ही ग्रामवासियों का महान् धर्म है । इस दृष्टि से गाँव के हर व्यक्ति को कलावान सेवक बनाए, जिससे वह गाँव को सुंदर और शोभायमान बनाएगा । खुद मेहनत करके,

[57] विश्व बालकृष्ण पर्वत, (2 ऑक्टोबर 2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य.44

स्वावलंबी बनकर गाँव को सहयोग देनेवाले का जीवन भगवान की तरह शोभायमान होगा। पहले अपने घर का काम, फिर दरवाजे पर आने वालों का प्रबंध और बाद में ग्राम सफाई का शौक। इस क्रम से परिश्रम करके मेंहनत के माधम से ही सभी कलाओं का योगदान समाज के लिए देना है। कला मनुष्य का भूषण है। जो व्यक्ति मन से सुखी-संतोषी रहकर जीवन जीना नहीं जानता है, उसका जन्म मरन व्यर्थ है।

उपयुक्त स्वावलंबी कला एवं उसका विकास

राजा हो या रंक, व्यक्ति की पहचान होती है, कला के कारण ही। बिना कला के कोई तुम्हें पहचानेगा भी नहीं। अतः बुद्धिमानी इसमें है की अमीर भी कलावान हो। अन्यथा घर के लोगों को गाने-बजाने का कोई ज्ञान नहीं होता है। तब नवरात्रौत्सव में वे बाहर के लोगों को बुलाकर भगवान के सामने जागरण करवाते हैं। खुद की समझ में कुछ भी नहीं आता है। इसलिए श्रोता भी बाहर के बुलाते हैं और खुद मात्र हंसने का काम करते हैं। ऐसे उपक्रम किसी काम के नहीं हैं, जिनका ज्ञान खुद को ही नहीं है। इससे अच्छा है कि स्वयं भी एकाध कला अर्जित करे। 'दूसरे के राजहंस से, भला अपना कपोत।' इस उक्ति के अनुसार हर व्यक्ति एकाध कला में स्वावलंबी बन जाए। कोई जीवन में एकाध भी कला जानता है, तो वह इन्सान है। अन्यथा उसके जीने की कोई वजह नहीं है। **58** [58]मीठा बोलना, ढंग से रहना, मेंहनत करना, लिखना-पढना ये सभी जीवन की आवश्यक कलाएं हैं। अतः टालमटोल न करते हुए निर्मल हदय से जीवन में ताकि सरलता एवं सात्त्विकता लाना ही कलाकार का वास्तविक धर्म है। वैसे हर एक के पास कोई न कोई कला होती है। अन्यों के सामने प्रस्तुत करने की तमीज मात्र अवश्य होनी चाहिए। कला की सहायता से परिश्रम करके घर आदर्श तथा झोपड़ी भी

[58] अमोल कडवे, (15डिसेंबर 2000), राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज की, 33

नंदनवन बनाए। कम दाम में चूने से भी सुंदर दिखने वाले मिट्टी के मकान, ईंटे, मटकें, सुराहियाँ, खपरे, गमले आदि सभी वस्तुएं अपने गाँव में कला की सहायता से बनाई जाए। गाँव में ही लकड़ी को रंदा मारकर उसमें सात्त्विक प्रतिभा भरने की कला बढही को अवगत होती है । अतः हथौडें, अहरनें, कुल्हाडियाँ, पिंजडें-हँसिए, कुदाल-फावडें, छींकें आदि जीवनोपयोगी सभी वस्तुएं गाँव में ही बनाई जा सकती है। पत्थर गढकर उसकी पतली सी फर्श बनाकर इमातर में लगाते ही वह मनोहर दिख पड़ी । इस प्रकार फल, झाडू, चटाई, निवारियाँ, पलंग, पापोश, चरसा-संदोर, इवरे, वखर आदि सभी वस्तुएं गाँव में ही बनने लगी। किसी ने रूई धुनकर सूत काता और उससे सुंदर वस्त्र तथा स्वेटर बुना। किसी ने मात्र डोर, बक्खर, हेंगा औी जाल बनाए। किसी ने खेत में करीने से सुंदर बाँध और मेंडें बनाई। किसी मकान मालिक ने अपने हाथों से सुंदर, सीधे तथा हरे-भरे परड लगाए। किसी ने घर की बगल में बगीचा बनाकर उसे पर नाली का पानी दिया। उस पर फल, फुल, पौधे लताएं और तरकारी उगाई। पानी का प्रवाह भूमिगत करने से वह दिख नहीं रहा था। धुआ रे के माध्यम से धुँआ बाहर छोडा। ढोरों के मूत्र की भी उचित व्यवस्था की, ताकी वह बाड़े में जमा होकर न रहे। घर में निर्मलता, साफ-सुथरापन तथा हर वस्तु स्पष्ट एवं साफ दिख रही थी। सभी वस्तुओं के नाम लिखे जाने के कारण बिना कहे सब सामान दिखने लगा। घर के माने की सभी वस्तुएं ग्राम कलाकार ने सुंदर एवं शोभायमान बनाई थी। विदेशियों से काफी सामान उधार में लाकर शेखी बघारने जैसा कुछ भी नहीं था। दिखने वाली हर वस्तु अपने प्रदेश अथवा देश की होने के कारण निश्चय ही सब लोग प्रशंसा तथा स्तुति करेंगे। खुद ही घर इस तरह सुंदर बनाए की कोई भी देखते ही प्रसन्न हो उठे। ऐसी मेहनत से जन्मी, स्वावलंबी उद्योग से उन्नत हुई और नखशिखांत तेजवाली कला देश को जीवित रखनेवाली कला है। [59] किसी की कला शरीर को सुंदर बनाती है, किसी की कला घर साफ-सुथरा तथा गाँव सुंदर बनाकर प्रांत एवं देश का भी भूषण बनती है। यह संपूर्ण कला सिर्फ मनुष्य को ही अवगत है। बस

[59] पुनसे नोरा, (5 नोव्हेंबर 2001),भारत साधू समाज, 28

कलाकार उसका उचित नियोजन करे। अन्यथा सिर पर विदेशी टोपी और कमर में खादी धोती पहनने से लगेगा की गणेश जी को हनुमान का मुँह चिपका दिया गया हो। एक के घर का दीवान खाना सुंदर था, परंतु उसके घर का शौचालय खराब था। घर आया अतिथि पहले शौचालय में घुस गया, ता वहां उसे सर्वत्र गंद्री दिखी। बाद में उसे घर के बावर्चीखाने में प्याज-आलू के छिलकें, चूल्हें में राख, कीबरा पडा कूडा-करकट, घर कोने में पान की पीक, कपाट के पीछ भरपूर गंदगी, दरी के नीचे सब कागज-कचरा और सर्वत्र बिना पोती हुई जमीन के दर्शनहो गए।[60]

कलात्मक आदर्श ग्रामरचना

मनुष्य को कलंकित करने वाली ऐसी कला ना हो। अपनी कला अंतर्बाह्य सर्वत्र परिपूर्ण होगी, तो जहाँ हाथ पहूँचेंगे वहां लक्ष्मी खुद ब खुद आ जाएगी। कला के माध्यम से अपना घर और जीवन सुंदर बनाया, परंतु गाँवबिगड़ गया तो वह काले शरीर पर कोड फूटने जैसा दिखेगा। अपनी कला द्वारा गाँव आदर्श बनाने के लिए गाँव के उपासना और निष्काम कर्म करनेवाले लोगों के सेवक मंडलों के उत्सव-समारंभ आयोजित किए जाए। सेवाभावी लोगों का श्रमदान सप्ताह आयोजित कर शौच गड्ढे, मोरियाँ, धोवन जल की व्यवस्था, सकरी सडकों को चौडा बनाना, बीच सडक के गड्ढे भरना, कँटिले झाड-झंखाड हटाना, रास्तों की मरम्मत आदि कार्य करे । कीचड के डबरे, टीलें आदि दुरूस्त कर सभी के लिए शौचालय तथा पेशाब घर निर्माण करे । नदी-तालाबों के किनारे सर्वत्र सफाई करके वहां चबूतरा, घाट आदि की व्यवस्था करे । उस पानी का उपयोग उत्पादन के लिए करे । गाँव के रास्तें, कुएं, मकान, पशुओं के बाडें आकर्षक तरीके से सजाकर रास्ते के दौतरफ़ा वृक्षारोपन करे । कचरा फेंकने के लिए स्थान-स्थान पर कूड़ेदान रखे, ताकी कहीं भी गंदगी तथा कचरा नहीं दिखेगा । तब ऐसे

[60] हरीभाऊ वेलुरकर, (2014), साधु सिंध की लहरे, पृष्ठ33,34

सुंदर गाँव में चारों दिशाओं से जीवनसंचार करनेवाली हवा बहेगी। गाँव में किसी का मकान गिरने पर अपना मकान समझकर सब मिलकर उसकी मरम्मत करे। ढोरों के बाडें घर में ना बनाए। बिना खिडकियों के घुटन एवं सीलन भरे दडबेनुमा मकानों की मरम्मत सब मिलकर करे।[61] अस्तव्यस्त तथा बेढंगे बाडें, बरामदें, कोनें, चैतर, छज्जें सभी खोदकर सीधे करे। रास्ते में कहीं भी लकड़ी तथा पत्थर वगैरा न रखकर सभी रास्तें चारों तरफ से साफ करके, खुले करके लोगों को उल्लसित करे। कोई इस कार्य में अडचन निर्माण करे, तो उसे गाँव समझाए। कँटिली बाड, घास के ढेर, फॅस के छप्पर तथा घूरे गाँव में न रखकर ओसना, खलिहान, लांक-भट्टा तथा आवा सुरक्षित स्थान पर रखे। मुत जानवरों की हड्डियाँ और गंदगी गाँव में यहां-वहां बिखरी न पड़े। इसलिए उन्हें गाडने की जगह निश्चित करनी चाहिए। गाँव में आवश्यक स्थानों पर मार्गदर्शक सूचना फलक लगाकर रास्तों तथा चैकों को महापुरुषों के नाम दिए जाए ।[62] अंधेरी सडकों पर सर्वत्र प्रकाश की व्यवस्था करके गाँव में पाठशाला, मवेशीखाना, बाजार एवं गुजरी आदि का उचित प्रबंध करे। गाँव के बाजार में कही भी माल रखना, भीड करना और लोगों की जेबें काटना जैसे अनुचित एवं अमानवीय काम ना हो। युवाओं का ऊल-जलूल बोलना, इधर-उधर देखकर राहगीरों को धक्का मारना, बीच में ही माल रखना, खूंटियाँ गाडना, बैल गाडियाँ खड़ी करना, गाय-बकरियों का खुला घूमना, बीच में ही कहीं मिरची रखना जैसी अस्त-व्यस्तता ना हो। दुकानें कतार में ना होने और कोई भी माल कहीं भी रखने के कारण ग्राहक तथा दूकानदार सभी की फजीहत होती है। सर्वत्र भिनभिनाती मख्खियाँ होती है। पैसे कमाने के लोभ में कोई किसी की नहीं सुनता। हम चुंगी देते है, इसीलिए हम कुछ भी कर सकते हैं। ऐसा कहनेवाले दूकानदार भी है, परंतु यह सब दुरूस्त करे। सभी मिलकर प्रेम पूर्वक उससे कहेंगे, तो

---

[61] राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज, मराठी/हिंदी भजनावली.47

[62] अशोक बाचुलकर,(02नोव्हेंबर2014),ग्रामगिता, 23

वह जिद नहीं करेगा। अगर ऐसा लगता है की कोई आपकी सुन नहीं रहा है, तो सभा तथा सरकार मार्फत गाँव दुरूस्त करे। वनज, परिना म, स्थान, पद्धति से संपूर्ण बाजार व्यवस्थित रखना, बंदरों की टोली से फसल की रक्षा करना आदि विविध कामों के लिए गाँव में समितीयाँ गठित करे। मनोरंजन हेतु व्याख्यान, कीर्तन, कलापथक, वादविवाद, पवाड़े, सात्त्विक नाटक आदि नित्य नूतन कार्यक्रम सभी मिलकर गाँव में आयोजित करे। ताकी ग्रामवासियों को शहर की याद न आए।**63**[63] विविध लता-वृश्रों से प्रसन्नता देनेवाला एवं मन स्वस्थ बनानेवाला सुंदर बगीचा, बाल-युवाओं को आनंदित रखनेवाले मैदान तथा झूलें गाँव में बनाएं। जाति-पांति गत भेदभाव भूलकर पूरे गाँव में सामुदायिक सहभोजन का आयोजन करे। गाँव में विश्रामगृह हो। पीने के पानी के लिए सुंदर कुआं हो। सभी दीवारों पर उद्बोधक वचन लिखे जाए। बच्चों को उल्लसित होकर खेलने-कूदने, व्यायामक रहने तथा मल्लों को अभ्यास करे के लिए गाँव में सुंदर अखाडा हो। बच्चों के वे गुलाब सरीखे गप्रीर यानी गाँव के सुपुत्रों का हरा-भरा बगीचा खिलने जैसा लगेगा।

गाँव के लोगों में सद्विवेक विकसित हो इसलिए गाँव में ज्ञानसंपन्न ग्रंथो से युक्त अच्छा सा पुस्तकालय हो। दुनिया में क्या चल रहा है, यह समझने के लिए गाँव में समाचारपत्र और आकाशवाणी की भी व्यवस्था हो। ग्रामवासियों की लिखावट सुरेख हो तथा चित्रादि कलाओं का समुचित विकास हो इसलिए गाँव में हस्तलिखित मासिक चलाए। गाँव के विचार, घटना उवं वृत्त सभी को मालूम होने चाहिए। इसलिए ज्ञान देनेवाली ज्ञानेश्वर की दीवार की तरह गाँव के चैक में फलक हो। गाँव साक्षर होने के उद्देश्य से प्रौढ शिक्षा की व्यवस्था की जाए। प्रत्येक घर को नंबर देकर वहां उसके नाम की पट्टी लगाई जाए। पशुओं की दवाई जानने वाले व्यक्ति की मदद की जाए। गाँव के अनुभवी लोकगीतों का संग्रह करे। सभी ग्रामनिवासियों को स्वास्थ्य एवं सुख मिल सके इस हेतु गाँव में स्वास्थ्य धाम बनाए। वैद्य अपने ही गाँव के लता-वृक्षों,कंदमूली से दवाएं बनाकर वह निसर्गोपचार

[63] विश्व बालकृष्ण पर्वत, (2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य.37

सहित रोगियों को दे। सांप का जहर उतारनेवाली, घाव भरनेवाली, हड्डियाँ जोडनेवाली औषधी बनाने वाले वैद्यमार्फत यह अस्पताल चलाया जाए । गाँव की अत्यंत आवश्यकतानुसार पुरुषों के अस्पताल की तरह महिलाओं के लिए प्रसूतिगृह भी हो। सभी प्रकार के नव-नवीन साधन उपलब्ध करा देकर गाँव में ही वैद्य और दाई तैयार करे ।

परस्पर पत्राचार के लिए गाँव में डाकघर बनाए । इस प्रकार स्वावलंबी बनकर सहयोग करने से गाँव में लोगों द्वारा सभी सुविधाएं निश्चय ही उपलब्ध हो सकती हैं । प्रत्येक की व्यर्थ जानेवाली श्रमशक्ति, बुद्धि और समय उचित कार्य के उपयोग में लाने से गाँव सुखी बनने में देर नहीं लगेगी । ऐसा आदर्श गाँव शहर से भी सुंदर ऐसा नंदनवन होगा और सभी को आनी तरफ आकर्षित करेगा।

आदर्श दिनचर्या की आवश्यकता

गाँव स्वस्थ एवं सुंदर बनाने के लिए गाँव के हर घर तथा व्यक्ति को सात्त्विक दिनचर्या द्वारा आदर्श बनाना पड़ेगा। प्रत्येक दिन नियमपूर्वक बिताने से संपूर्ण जीवन सुधरकर गाँव स्वस्थ-संपन्न बनेगा और सभी देवी-देवताएं भी प्रसन्न होंगी। नियमों का मुख्य अवलंब है, मजबूत निर्धारण उसी पर जीवन का ऐतिहासिक तथा आध्यात्मिक उत्कर्ष निर्भर है । इस नियम से संपूर्ण जीवन ढंग से बीतता है, परंतु एक बार उसकी तरफ दुर्लक्ष करने से हर बार गलत ही होता जाता है ।[64] एक बार पूरी रात जागने से वह सुबह उठेगा ही नहीं। नियम तोडने के कारण उसका पूरा दिन आलस्य में बीत जाएगा। घर में किसी ने टोका नही, किसी की भी धाक नहीं है तथा काम की परवाह न होने के कारण अगले दिन भी वह दस बजे उठा। इस प्रकार कुछ दिन धान न देने से देर से उठना उसकी आदत हो गई। बाद में कुछ भी करने पर उसमें सुधार होता नहीं। ऐसा न हो इसलिए रोज प्रातः ही उठे। अगर कोई उठता नहीं है, तो घर के लोग उसे जगाए। कुछ लोग घर में धनदौलत की बिल्कुल कमी न होने के कारण देर से उठने को

[64] पुनसे नोरा,(5 नोव्हेंबर 2001), भारत साधू समाज, पृष्ठ28,29

भाग्यवान की निषानी समझते हैं और उसे आलसी बनाते हैं। अरे! मा? सोने के कारण कोई सौभाग्यशाली बनता है, तो सदैव लेटे रहनेवाले और लेटकर पीने वाले बीमार लोग महा सौभाग्यशाली होने चाहिए! भाग्यवान की ऐसी उल्टी परिभाषा करना बुद्धिमानों के लिए अशोभनीय है। सुबह उठनेवाला ही उसली भाग्यवान है। वस्तुतः भाग्योदय होता है, श्रम से। मात्र सोने वाले लोग उसे बर्बाद कर अन्यों को अधिक कष्ट देते हैं और खुद का भी उत्साह घटाते हैं। सूरज ऊपर चढकर धूप आने पर भी घर का मालिक करवटें बदलता रहता है। तब हम ही काम क्यों करे? ऐसा सोचकर सभी नौकर-चाकर भी आलस्य करते हैं। इस प्रकार कुत्तों की भौं-भौं से सर्वत्र अंधेरा मचा जाता है। बच्चें रोते-धोते हैं, जबकी घर की सभी औरतें मात्र सोई हुई होती हैं। देर से उठने के कारण आलस्य बढ गया। इससे घर की पवित्रता खत्म हो गई, सर्वत्र अव्यवस्था फैल गई और अजीर्ण, बद्धकोष्ठता बढकर अनेक रोग निर्माण हो गए। [65]

प्रातःकाल का महत्त्व

इससे हुआ ये की उसे सदैव वैद्य-डॉक्टरों के पास जाना पडा। परिना मतः घर के कामधाम बर्बाद हो गए। घर में दुर्भाग्य घुस गया। प्रातःकाल की हवा जीवन के लिए सदैव पोशक, स्वास्थ्यदायी और सभी प्राणीजनों को प्रसन्नता देने वाली होती है। उस वक्त सभी पपेड़-पौधें, पशु-पक्षी जग जाते हैं, कालियाँ भी खिल उठती हैं। सुबह गाय-भैंस दोहने से उसमें अधिक सार-अंश का संचार होता है। सुबह की हवा के कारण खून की लाली और रोगप्रतिबंधक शक्ति भी बढती है। इसलिए सुबह ब्राह्ममुहरत पर उठकर प्रथम आसनस्थान पर प्रातःस्मरण करे। निकले हुए नीवन दिन में अपनी तरक्की हो, उत्तम कार्य हो तथा नई स्फूर्ति प्राप्त हो इसलिए ईश्वर की प्रार्थना करना ही प्रातःस्मरण है। उस समय जो कोई 'बुरा न हो' इस प्रकार चिंतन करके संकल्प करता है, वही

[65] सुधा, (02 नोव्हेंबर 2000), श्री. सिंधु के लहरे (पुर्वाध) पृष्ठ-46,47

सुसंस्कारित बन तीं से अपनी उन्नति कर लेता है। अंतः प्रातःकाल में प्रातःस्मरण करके नैसर्गिक उत्साह से परिपूर्ण बने। सब नित्यकर्म निपटाए। सुबह शैचमुखमार्जन करने से शरीर के वायुदोशों का शमन होता है। शरीर को निर्मलता एवं नई स्फूर्ति प्राप्त होती है। सुबह उषपान करने से शरीर की आंतरिक इंद्रियाँ शांत होती हैं। तत्पश्चात ठंड़े पानी से स्नान करे, जिससे मन प्रसन्न होगा। ठंड़े पानी से स्नान की महिमा बड़ी अपार है । इससे त्वचा की ताकत बढती है और शरीर उत्साह से सदैव तरोताजा रहता है । बडों का अनुभव है की मगज की जगह ठंड़ी रहने से बुद्धि का उत्कर्ष होता है।[66]गरम पानी से नहाना बीमार व्यक्ति का लक्षण है। ऐसी आदत शरीर के लिए हानिकारक है। सूर्योदय के पूर्व स्नान करने के पश्चात एकाध मंदिर अथवा पवित्र स्थान पर सामुदायिक ध्यान-उपासना करे। सुर्योदय के वक्त सुवर्णप्रभा अत्यंत मनोहारी एवं शोभायमान होती है। उस वक्त निसर्ग में भी शांति-प्रतिभा की वृद्धि होती है, जो योगियों के लिए विशेष लाभदायी सिद्ध होती है। सामान्यजनों का यह कहना अनुचित है की केवल योगी ही सुबह उठकर ध्यान करे, हमें उसकी जरूरत नहीं है । योगी की समाधि, साधक की वृत्ति स्थिर करने का सन्मार्ग योग और गार्हस्थिक व्यक्ति के जीवन को पवित्र तथा उज्ज्वल करने का अवसर प्रातःकाल7 में ही प्राप्त होता है। ध्यान के साथ ही प्रातःकाल में घुमने की आदत डाल लेने से सुबह की प्राणवायु के स्पर्श से शरीर और मन दोनों का शुद्धिकरन होगा ।[67] कोई दौडते हुए, कोई चलते हुए, कोई आसन, सूर्यनमस्कार करते हुए, कोई गाते हुए, तो कोई, पठन-पाठन, चिंतन करते हुए इस प्रकार की आदत मन और शरीर दोनों को लगाकर जीवन सुंदर बना रहा है - ऐसा चित्र हर दिन सुबह हमें दिखाई देना चाहिए। घर हो या आश्रम, यात्रा में हो अथवा तीर्थक्षेत्र में, परंतु रोज सुबह नियमित रूप से यह अभ्यास करना ही चाहिए। प्रातःकाल में घर, आश्रम, रास्ता

---

[66] रमेंश गुप्ता (आष्टीचा स्वातंत्र्य संग्राम 1942) बंडखोर खेडयांची गोष्ट , 47

[67] डॉ. भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ. 35

साफ करके गाय-भैंस के बाढें भी साफ करे । पुरुष की मदद से औरतें सभी काम फटाफट करके लिपाई एवं रंगोली करे, कहीं भी गंदगी ना रखे। जहां सुबह सफाई होती है, कोई भी आलस्य में सोया हुआ नहीं होता है, वही लक्ष्मी तथा स्वास्थ्य वास करता है। उन्हें भरपूर आयु मिलती है। [68]

विकारी अन्न के दुष्परिणाम

रबड़ी, पुरन पोली (भरूआ पूरी), पकौड़ी-पुड़ी उन्मत लोगों का भोजन है । छने हुए आटे में खोया भने पर खाते वक्त एकदम स्वादिष्ट लगता है, पेट मात्र बेहाल होता है। कुछ लोग खाने की कला का विकास करके टोकरी-टोकरी भर भात खाते हैं और ऊपर से इमली का पानी भी लेते हैं। कुछ लोग शर्त लगाकर भरपूर लड्डू, परढे, रबड़ी, हलुवा चट कर जाते हैं । फिर हजम न होने पर भांति-भांति के रोग शरी को जखड लेते हैं और अनेक यातनाएं झेलते हैं । कुछ लोग मात्र स्वाद के लिए भोजन करते हैं और जरूरत से ज्यादा पेट में ठूंस लेते है। बाद में हैजा, बाद में हैजा, बदहजमी, उदरकुंदी, संग्रहणी जैसी बीमारियों से त्रस्त होते हैं और ऐसे लोग बदबूदार वायु छोडते हैं। तब लोग मजाक उडाते हुए उन्हे कहते हैं, 'क्यों मनमानी खाने-पीनें में?'

[68] डॉ अशोक बाचुलकर,(02 नोव्हेंबर 2014), ग्रामगिता, पृष्ठ23,24

सदाचार प्रभाव

व्यसन, आलस्य तथा दुराचार से गाँव का हर व्यक्ति दूर रहे। जहाँ जो सदगुण होंगे, उनका अंगीकार करे। इसी से व्यक्ति और गाँव का जीवन उन्नत होगा। जीवन उज्ज्वल हो ऐसा अगर लगता है, तो सभी काम अच्छे और ढंग से करे। भोजन के स्थान पर, निद्रा के स्थान पर, सभा के स्थान पर, उद्योग के स्थान पर, सहज ही चलने-फिरने तथा विशेष प्रसंगों में भी सोच समझकर आचरन करे। जीवन में सुसंस्कार, ईमानदारी, बुद्धि, स्वास्थ्य, पवित्रता, और सात्त्विकता हो, इसलिए कुढ दिनचर्या और आहार-विहारादि बातें यहां सुझाई गई हैं। उनका अनुभव लेकर ग्रामवासी स्वयं का उद्धार करे, जिससे गाँव में सात्त्विक सौंदर्य स्थापित होगा। इस प्रकार एक-एक कार्य करने में ही स्वर्गीय सुख का आनंद है।

अध्याय 4

तुकडोजी के विचारों से सामाजिक

परीवर्तन का दृष्टिकोण

आज की भ्रांतिमूलक स्पर्धा और द्रव्यासक्ति की परिणीती एक श्रोता ने आशंका प्रकट की, संत-ऋषियों कर जीवन सूत्र- 'साधारण रहन-सहन और उच्च विचार', आज उपयोग में नहीं आ रहा है। जबकी कीमती कपड़ों के भडकीले रहन-सहन का ही समाज पर अधिक प्रभाव पड़ रहा है। सीधे-सात्त्विक मनुष्य की कोई पूछता नहीं है। वैभवशाली विष्णु का पीतांबर देखकर समुंद्री देवता ने उसे लक्ष्मीदेवी अर्पित कर दी। भोले-भाले भगवान षंकर के चिथडें देखकर, उन्हें हलाहल विष दे दिया। हमेशा ऐसा ही होता है । सबका अनुभव है की आज पैसे खर्च करते ही न्याय, सत्त, कीर्ती, सन्मान, बडप्पन सबकुछ मिल जाता है। [69]तुकडोजी कहते हैं मित्र,धन ही देवता है-इस झूठे अनुभव के कारण ही समाज जीवन में सर्वत्र दुख व्याप्त है। लोग इसे ही सत्य समझकर एक-दूसरे से लडते हैं, स्पर्धा करते हैं और इस प्रकार उनका अधिकाधिक पतन हो रहा है। अपनी रोजाना शानो शौकत के लिए लोग रूई से भी सफेद ऐसे वस्त्र एवं सोने से भी पिले आभूषण धारण कर रहे हैं। यह तो कृत्रिमता का चरम शिखर है। स्वच्छता, पवित्रता, शुध्दता एवं नैसर्गिकता की तुलना में लोगों को कृत्रिमता ही अधिक प्रिय लगती है और ऐसों को ही लोग सुशिक्षित समझते हैं। स्नान किए बिना इत्र फवारना, मैला होने पर भी सुंदर दिखे ऐसे नए-नए कपड़े रोज पहनना-फैशन के ये ठाठबाट बडने पर, कीमती कोट सी लिया, तो पैंट भी कीमती चाहिए। इन बडती जरूरतों के लिए कुबेर का खजाना भी कम पड़

---

[69] सुदाम सावरकर, जीवनयोगी-खंडड-5, पृष्ठ17,18

जाएगा । इसीलिए मजदूर घूस लेते हैं, खुले आम डाका डालते हैं और इस प्रकार पैसों के लिए अन्याय तथा अत्याचार करते हैं। कोई अगर सीधा-साधा तरिका अपनाता है, तो वह भी उनमें पीस जाता है, अस्वस्थ हो जाता है। सर्वत्र अशांति फैल जाती है। कुछ घर में भूखें रहते हैं, बच्चों को दूध नहीं पिलाते, मात्र बडप्पन दिखाने के लिए, अपना बाहरी रहन-सहन बडा शानदार रखते हैं। ऐसा किए बगैर धन की प्राप्ति नहीं होगी अथवा व्यवसाय नहीं होगा, ऐसा किसी को लगता है, तो इसका रहस्य भी सभी समझ गए हैं। फिर ऐसी जिद करने के बजाय सन्मार्ग पर क्यों नहीं चल पड़ते? धन का जुनून सवार होने के कारण इन्हें सन्मार्ग नहीं दिखता। अनेक लोगों की ऐसी धारना है की पैसों से ही मोक्ष, सत्ता, संत एवं कीर्ति सब कुछ प्राप्त होते हैं और ईश्वरपूजा भी उसी से होती है।

पैसों का अनुचित उपयोग एवं दुष्परिणाम

यह धारना बिल्कुल गलत है। पैसों के कारण ही दुनिया में कलह होते हैं। अपने प्रियजन भी पराए बन जाते हैं और पैसों के कारण ही अंत में नरक में भी जाना पड़ता है। नियम से प्राप्त करके सूझबूझ के साथ खर्च किया गया पैसा ही जीवन में सुख देता है, अन्यथा पैसा यानी जहर है। वह मनुष्य का चित्त बंदर की तरह चंचल बनाकर उसे क्षणभर के लिए भी सुकुन मिलने नहीं देता है। पैसा कमाते समय अनेक चिंताएं होती हैं। पशुवत् कष्ट कर मनुष्य अपने तन, मन एवं जीवन की बरबादी करता है। चोरों उवं आग से संपत्ति का रक्षण करने का खतरा बढ जाता हैं। उसके उपभोग हेतु मनुष्य बिल्कुल जानवर जैसा व्यवहार करने लगता है। ऐसी धन-संपत्ति के कारण वह सदैव बेचैन रहता है। वह पैसा कैसे खर्च करे, इस चिंता में उसे ठीक से नींद भी नहीं आती है। **70**[70] तनखा का आया हुआ पैसा अच्छे काम के उपयोग में न आकर, फिल्म, तमशा पर खर्च हुआ। बचा हुआ पैसा शराब,

[70] पुनसे नोरा, (5नोव्हेंबर 2001), भारत साधू समाज, पृष्ठ31,33

गांजा, जुआ, व्यभिचार आदि पर खर्च हो गया। ऐसे लोग उन्मादित होकर रास्ते में झगड़ा करते हैं और बाद में अपना ईमानदारी सिद्ध करने हेतु वकीलों के घर भरते है। कुछ लोग उल्टा-सीधा खाते है और बाद में पेट-सिर दुखने पर डॉक्टरों पर खर्चा करते हैं। बडप्पन को दर्शाने के लिए कुछ लोग दावत, परस्कार, पारिश्रमिक देते हैं तथा अनावश्यक चीजें लेकर खुद ही फँस जाते हैं। कुछ लोगों की कमाई उन्हें ही कम पड़ती है। जबकी खर्चे बढ़ाकर, वे कर्जा लेते हैं और जीवन भर के लिए संकट मोल लेते हैं। कर्जा लेकर खर्च तो करते हैं, परंतु उतनी कमाई न होने के कारण घर पर संकट आता है। तब जी घबरा जाता है। क्या करना है समझ में नहीं आता है। समय नहीं कटता है। फिर बुद्धि चंचल बन जाती है और वह चोरी-चुगली का काम शुरू कर देता है।

कमाने की अक्ल नहीं और गिनती की समझदारी नही, लेकिन खान-पान पर नियंत्रण न होने के कारण चोरी का रास्ता अपनाना पडा। इससे मां-बाप की बदनामी हुई तथा कुल भी कलंकित हुआ। पुत्र ही दुश्मन बन जाने की वजह से उन्हें कोई भी अच्छा नहीं कहता। अपनी मौज के खातिर धर्म का त्याग कर घिनौने काम एवं व्यभिचार खुद किए तथा औरों से भी करवाए। कुछ अमीर आसुरी प्रवृत्ति वाले लोग अन्य लोगों को पैसा देकर गुलाम बनाते हैं और उनसे पाप करवाते हैं। दुसरों को फंसाकर धन इकठ्ठा करते हैं। उसका उपभोग भी लेते हैं, किंतु अंत में इन सबकी फजीहत एवं अपकीर्ति होती है। ऐसे कई लोगों के उदहारण हमने सुने हैं।

कुछ जवानी के घमंड में दस-बारह शादियाँ करके काफीर धन व्यय करते हैं। बाद में उन्हें कोई नहीं पूछता। तब 'घर में पैसा लाइए, अन्यथा शादी सिलिए की', कहकर बिवियाँ उसे कच्चा चबाती हैं। लोगों की बातों में आकर कुछ लोगों ने बिना सोचे-समझें घर में वैश्याएं रख ली। फिर उनकी वजह से सारा घर-बार खोना पडा। उसका बंदर जैसा विषय लिप्त जीवन देखकर लोग उवं सगे-संबंधी दूर से ही हंसने लगते हैं। उसकी तरफ कोई भी धान नहीं देता है। कुछ लोग जायदाद के लिए वारिस गोद लेते हैं और बाद में लडते-झगडते कंगाल बन जाते हैं। बची हुई जायदाद गोद लिए हुए के मित्र

ही उडाते हैं। कोई 'पुत्र की प्राप्ति होने पर, उसके वनज के माफिक सोना-चांदी चढ़ाएंगे' ऐसी मिन्नत मांगते हैं।

कुछ लोग आरंभ में बच्चें होने की ख़ुशी में गाँव-गाँव में मिठाई बांटकर अपनी संपूर्ण जायदाद उडा देते हैं। फिर दर्जनों बच्चें होने के बाद खर्चे के लिए फूटी कौड़ी न होने के गम में अपना सिर पीट लेते हैं और लागों से भीख मांगते हैं। कुछ लोग इससे बच गए, परंतु उन्होंने अपने बच्चों की शादी में आतिशबाजी, भव्य पंडाल, लड्डू, जलेबी, रबड़ी पर काफी रूपया खर्च किया। कुछ लोगों ने बच्चों के जन्मदिन पर संस्का रादि व्रतबंधन करने में, तो कुछ ने मां-बाप की बरसी में ढेरों पैसा खर्च किया। बाद में पिता के नाम पर एक रोटी के लिए भी मुहताज हो गए। कुछ लोग इससे बच गए, परंतु उन्होंने दशहरा, दिवाली, होली जैसे त्यौहारों में सारा पैसा खर्च किया।

कुछ लोग गलत बातों पर पैसे खर्च नहीं करते, लेकिन अपनी प्रतिष्ठा हेतू जान खपा देते हैं। उसके लिए बहुत सा पैसा खर्च करते हैं। कुछ लोग अपनी संपूर्ण खेती की तरफ ध्यान नहीं देते हैं और उसमें कुछ थोडा इधर-उधर होता है, तो उसे पाने के लिए कोर्ट-कचहरी में समय बरबाद करते हैं। कुछ लोग समाज में आना नाम हो, इसलिए साहब को विभिन्न पकवानों की दावत और नजराने परश करते हैं। कुछ लोग प्रतिष्ठा हेतु अपना घर-बार तक बेच देते हैं। आगे चलकर उनके बच्चें भिखारी बन मर जाते हैं। कुछ ने चुनाव में अपना पूरा धन फूंक डाला, और फिर लोगों में इज्जत न रहने के कारण दुख सहन कर रहे हैं। किसी ने खेती-बाड़ी बेचकर रास्ते पर बंगला बनाकर शहरी जीवन का मजा लूटा और अंत में अन्न के लिए मोहताज बन गया। [71] कुछ ने व्यापार के लिए घर बनाने में पूरा पैसा बरबाद किया। बाद में कौनसा व्यापार करना है, यह न सूझने के कारण खाने-पीने के लाले पड़ गए। कुछ

---

[71] 2) सुधा,(02 नोव्हेंबर 2000), श्री. सिंधु के लहरे(पुर्वाध), पृष्ठ19,20

देश-विदेश में घूमकर अलग-अलग चीजों का संग्रह करते हुए बेहाल हो गए, तो कुछ चमत्कारों के पीछे पड़कर ढोंगी बाबाओं पर पैसे उडाने लगे। ढोंगी बाबा को सेवा, दान-दक्षिना , मिष्ठान एवं कीमती वस्त्र आदि दिए। परिना मतः वे भिखारी बन गए। फिर धन के लिए बाबा से ही पूछने लगे। ठग से ठग मिलने के कारण अंततः निराशा ही मिली। धनहीन को कोई नहीं पूछता है। अतः बाबा भी दान-दक्षिना मिलने तक मीठा बोला और धन समाप्त होते ही घर भूल गया, इस प्रकार उसका सर्वानाश हो गया। चमत्कार के लिए भक्ति की जाने के कारण उसकी ऐसी बुरी हालत हो गई। इसी कारण अनेक ढोंगी बाबाओं ने लागों को घर-बारसहित लूट लिया। कुछ लोग अपने पैसें साथ में लेकर तीर्थयात्रा पर चले गए। वहां चोर-उचक्कों ने उनकी जमकर पीटाई की और सारी पैसे छीन लिए। फिर अत्यंत दयनीयता से भीख मांगते हुए वे घर लौट आए। [72]

ढोंगी धर्माचरन, व्यक्तिनिष्टजीवन एवं उसकी प्रतिक्रिया

अब कोई भी कीर्तन अथवा उपदेश समझने-सुनने को तैयार नहीं है। ढेर सारी संपत्ति में से चिटियों को थोड़ी शक्र डालने जैसा दान-धर्म करते हैं। हजारों लोगों का शोषन कर, उन्हें रोगी बाना और बाद में उनके लिए धर्मार्थ अस्पताल चलाकर स्वयं को धर्मात्मा कहलवाने के समान है। आज के मालिक शहरो में रहते हैं। उनके बच्चें फिल्म देखने के लिए गाड़ी का इस्तेमाल करते हैं। व्यभिचार, व्यसन, चोरी करके देहातियों को लूटते हैं। जबकी दिन-रात मेंहनत करके भी मजदूर को पेटभर खाने को मिलता नहीं है। कुछ लोगों ने शक्ति एवं बुद्धि के बलबूते बहुत धन कमाया। और कहते हैं की 'मरते हैं, तो रने दो। जिंदगी ही उतनी थी, तो दवा-पैसा भी क्या करेगा?' श्रम करनेवालों के प्राण जाने पर भी उन्हें फूटी कौड़ी नहीं दी गई।

---

[72]) ग्रामजागृती भजनावली, पृष्ठ46,47

व्यापक दान-धर्म एवं समानता की शिक्षा के अभाव में रक्तरंजित क्रांति अटल

श्रमिकों के साथ अमीर लोगों का जानवरों जैसा सुलूक करना और उनसे जोर-बरदस्ती तथा धाक दिखाकर काम करवा लेना आगे चलके हानिकारक साबित होगा। इसीलिए गरीब लोग अमीरों को 'गुंडा' कहते हैं, लेकिन फिर भी अमीरों की आंखों पर से परदा उठता नहीं है। तब सरकार द्वारा कानून बनाकर अथवा धर्म के माध्यम से हल नहीं निकलता है, तो लोग क्रोधित होकर रक्तरंजित क्रांति की ओर मुड जाते हैं। तब मन में डर बैठता है। ऐसा होने से पहले ही सभी जगज जिससे एक-दूसरे का कल्याण होगा। इस प्रकार के भले व्यवहार से ही ध्णन अर्जित करे, गाँव के हित के लिए वह धन खर्च करे एवं अपनी क्षमतानुसार गाफव के कार्य व्यवस्थित करे। आवश्यकता पड़ने पर लोगों को मदद न कर पूरा गाँव कर्ज में डूबने तक की कंजूशी न करे। अविचार से पैसा न उडाए, गरीबों को मत फंसाए तथा लेन-देन दोनों में न्यायपूर्वक समानता रखे। अंत में रक्तरंजित क्रांतिन हो इसलिए गरीबों के प्रति हमदर्दी रखे। कोई भी इसका विरोध न करे। सब मिल-जुलकर रहते हुए, हर काम सभी का है, ऐसा समझकर करे। उपरी तौर पर तो गरीब-अमीर का भेद न दिखे।

उसी प्रकार गुन, बुद्धि एवं कार्य में सब में भिन्नता हो, तो भी सभी समानता का भाव ना छोड़े। सब में समानता रखने की शिक्षा जिस दिन समाज को मिलेगी वह दिन सच में भाग्यषाली होगो। फिर वह भाग्य कल्पांत में भीनष्टनहीं होगा। ऐसे नेता तैयार होंगे, तभी समानता की क्रांति आएगी और गाँव से दल-भेद का भ्रम समाप्त हो जाएगा। ऐसे लोग ही समाज को सही ज्ञान देकर समानता का परिवर्तन करेंगे। ऐसा सद्विवेक सब में निर्माण होकर गरीब-अमीर का भेद खत्म हुए बिना समाज की स्थिती नहीं सुधरेगी। यह समझना जरूरी है, अन्यथा काल इसी ताक में बैठा रहता है। और आगे बिना

रूके, वह समाज पर तेजी से रक्तरंजित क्रांति थोंप देता है। इसीलिए लोगों में सामाजिकता एवं सामुदायिकता की भावना बढ़ने दे। [73]

श्रमनिष्ट होना यही उपाय

अमीरों द्वारा किए जाने से, यह वर्ग-कलह केवल पैसे देकर परोपकार समाप्त होनेवाला नहीं है, तो श्रमिकों के श्रम का महत्त्व समझकर अमीर भी अपनी कार्यनिष्ठा दिखाए। अपने श्रम से गरीबों के दुख दूर करे। परस्परपूरक रहना, ही धर्म का वास्तविक सूत्र है- यह आप जैसे समझदारों को बताने की क्या आवश्यकता है? कोई जानवरों के समान मेंहनत करता है, तो कोई टिड्डी दल की तरह नाजुक बन घमता रहता है। इसी कारण गाँव की स्थिती बिगड़ गई है। हमारे बाप ने बहुत कमाया है, हम धनाढ्य है, इसलिए हम घर बैठे ही खाएंगे। कारण हमारे लिए किसी चीज की कमी नहीं है, ऐसा कहनेवाला महा अज्ञानी है। वह नहीं जानता की मेंहनत न करनेवाले आगे चलकर जमीन-धन सबकुछ खो बैठेंगे।

इसीलिए आपसे कहता हूँ की कोई न कोई उद्योग करके आत्मनिर्भर बनो। दूसरों के श्रम पर आश्रिम न रहकर, खुद की कमाई का स्वाद चखो। आज निठ्ठल्लों की चलती है, परंतु यह समझ लो की भविष्य में उनकी कोई खैर नहीं है। सभी प्रकार का कला-कौशल सीखकर, ईमानदारी से अपना पेट भरे। सुशिक्षित लोग जब ऐसा करेंगे, तभी मजदूर ताने मारना बंद करेंगे, अन्यथा वे आपको बेईमान समझेंगे। हम कष्ट करे और आप आराम करे, फिर आप ही समानता का पाठ पढ़ाए, यह नेतागिरी नहीं चलेगी- ऐसा वे स्पष्टरूप से कहेंगे। सभी को समान प्रेम, समान नियम, तो श्रम भी सभी को

[73] 5) सुदाम सावरकरा, संक्षिप्त जीवनदर्शन(ग्रामगीता), पृष्ठ57,58

अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार करना ही चाहिए। एक काम करे और दूसरा आराम करे, यह देश के हित की दृष्टि से घातक है।

'यह दुनिया है, श्रम करनेवालों की', इस नियम से जो कष्ट करेगा, इसी की खेती और जो श्रम करेगा, लक्ष्मी उसी की दासी बनेगी। यही आज की प्रवृत्ति है तथा समाज की जरूरत भी, इसलिए बड़े लोग इसका बुरा न माने। विद्वान, शिक्षित, महंत, अमीर सभी इरादतन् काम करे, इसी में उनका बडप्पन है। इस कारण सभ लोग काम में जुटकर, कार्य करना सुविधाजनक होगा। वैभव के कारण काम करने में जो शरम आती थी, वह भी इससे दूर हो जाएगी। काम करने से बुद्धिमानों का ज्ञान प्रत्यक्ष उपयोग में आएगा और खेती से पूरे देश की उन्नति होगी। [74]

सभी कामों का मूल्य समान

बिना काम-धंदे के सुखोपभोग करना मनुष्य के लिए लांछनीय है तथा आलसी को खाना-पीना देना महापाप है। अगर कोई कहता है की श्रम करने से मनुष्य हीन अथवा नीच बन जाता है, तो उसे देशद्रोही, फसादी तथा पापभक्षी माना जाए। खुद के काम करने में कोई लाज-शरम नहीं है, उल्टे गर्व की बात है। जिसे जो कार्य अथवा अभ्यास पद्धति अच्छी लगे, वह वही शिक्षा लेकर आगे बढे। सभी काम मूल्यवान एवं ऊँचे दर्जे के हैं। श्रीकृष्ण ने पंगतियों में जूठन उठाकर और विठ्ठल ने मृत जानवर ढोकर यह साबित किया है। कोई भी काम कम महत्त्व का नहीं है। सभी काम आवश्यक हैं। अतः उनका मूल्य भी लगभग समान है। खेत मजदूर, बेलदार, बढई, लुहार, दर्जी, धोबी, चमार, मेंहतर, वैद्य एवं मंदिर का पुजारी सभी समान ही काम करते हैं। कोई बुद्धिमानी पुरान कहता है, तो कोई भटके हुओं को सन्मार्ग पर ले जाता है। इस प्रकार उनके गुन-धर्म एवं प्रकृति के अनुसार निसर्ग ने यह सारी रचना की है। सभी को चाहिए की एक-दूसरे का सम्मान करके दुनिया का व्यवहार

---

[74] विश्व बालकृष्ण पर्वत, (2ऑक्टोबर 2007), पृष्ठ71,72

चलाए। कोई किसी भी काम में ऊँच-नीच ना समझे। व्यावहारिक दृष्टि से फिर कोई ब्राह्मन हो या कोई महार हो। सभी का काम अपनी-अपनी जगह श्रेष्ठ एवं महत्तवपूर्ण है। सभी कामों में सभी की जरूरत है। इनमें से एक भी न हो, तो दुरिया का काम अधूरा ही प्रतीत होता है। [75]

जिस प्रकार लकडियों के गुच्चे पर बांधी गई लोहे की सांकल की एक कड़ी टूटते ही सारी लकडियाँ बिखर जाएगी, उसी प्रकार काम की स्थिति है। सभी लोग समान रूप में काम करेंगे, तथी यह धरती बी रहेगी। जिसके पास जैसी कला, कार्यपद्धति, सामग्री एवं शक्ति-बुद्धि होगी, उसके अनुसार श्रम करके वह देश-कल्याण के उपयोग में लाए। इस प्रकार काम करने पर आपको गाँव में ही आत्माराम (देव दर्शन) और सुख-चैन का धाम प्राप्त होगा, अन्यथा विपत्ति से छुटकारा नहीं। अरे, सभी सुशिक्षितों, साधुओं, अमीरों, अधिकारियों, पंडितों अब सारे उठो! क्रांति तुम्हें पुकार रही है। अब हर गाँव को जगाकर, यह भेद समूल नष्टकर दो! और ग्रामोन्नति के दीए जलाओ। [76]

इस प्रकार गुरू, शास्त्र एवं स्वानुभव इन तीनों की कसौटी पर उतरा हुआ और श्रम-संपत्ति का महत्त्व प्रतिपादित करनेवाला 'ग्रामगीता' का सत्रहवां अध्याय समाप्त हुआ।

बेरोजगारी की मनोवृत्ति और उत्पादन की समस्या

एक श्रोता ने प्रश्न पूछा, गरीब मजदूरों के लिए कोई काम नहीं है। बेरोजगारी की संख्या बढ ही रही है, तो अमीरों के लिए क्या काम बचेगा? (राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज कहते हैं) श्रोता द्वारा इस प्रकार प्रश्नष् पूछा जाना भ्रम निर्माण करना है। कारण संपूर्ण देश दीन-दरिद्री-अज्ञानी है। मातृभूमि को सुखी बनाने के लिए महान् विभूतियाँ बार-बार जन्म लेंगी ऐसा दिल से कह रहे हैं, फिर भी इसे मात्र

---

[75] अमोल कडवे, (15डिसेंबर 2000), राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज की ,47

[76]रूपराव वाघ, (1999), राष्ट्रसंत साहित्य प्रकाश, नागपूर, 71

कुछ भी काम नहीं दिख रहा है। देश के दरिद्री, दुखी, अधनंगें, भूखे लोगों के लिए बहुत कुछ किया जा सकता है। फिर भी इन्हें उनका दुख नहीं दिख रहा है? आज हमारे सामने इतना काम है की थोडा सा भी आराम न करके निरंतर काम करनेवाले प्रबल कार्यकर्ताओं की स्थान-स्थान पर आवश्यकता है

लोगों पर प्रभाव डालने के लिए जो साहब बनना चाहते हैं तथा बिना श्रम के ऐशोआराम करते हैं, वही लोग बेरोजगार हैं। सुशिक्षितों को चाहिए की प्रचार और प्रयोगात्मक कार्य से अपने ज्ञान का उपयोग अन्यों के लिए कर, परंतु ऐसा न होकर ये शिक्षित लोग खुद ही समाज जीवन के लिए रोग साबित हो गए हैं। एक तरफ शिक्षित-अमीर और दूसरी तरफ उन्हीं की देखा देखी करनेवाले गरीब-मजदूर। दोनों के भी घरों में आलस और ढिलाई ने ढेरा जमाया है। भूख लगने पर घर-घर जाकर काम मांगते है, अन्यथा अपनी झोपड़ी में मजे में पड़े रहते हैं। अमीर लोगों के काम नहीं करने से वे तो भिखारी नहीं बन गए, फिर हमारा ही कौनसा नुकसान होगा-ऐसा सोचकर यह कर्मचारी आढ बजे के काम पर जाने के लिए दस बजे नींद से जागता है और सभी कामों पर पानी फेर देता है। काम के लिए हाथ न चलाकर मुँहह से मात्र बकबक करता है और मजदूरी न मिलने पर कोहराम मचा देता है। यह सरासर गलत है। काम के पैसे ना छोड़े, परंतु निठल्ला बनना हमारा व्रत न हो। वजदूर को चाहिए की सुबह जल्दी उठकर अपने नित्य कर्म निपटाकर घर काम पूरे कर ले और तुरंत काम में लग जाए। काम का समय होते ही ऐसा दृश्य दिखना चाहिए की चारों तरफ से मजदूर जा रहे हैं। उत्पादन की जिम्मेदारी मजदुरों पर है। उत्पादन ही गाँव की मुख्य संपत्ति है। अतः काम में कोताही बरतना पागलपन ही है। इधर मजदूरों की कार्यनिष्ठा खत्म हो गई और उधर अमीर आलसी बन गए। परिना मतः देश का जीवन संकटमय हो गया। उत्पादन की गति धीमी होकर उपभोग की भावना बढी। जमीन की मशक्कत नहीं नहीं हो रही है, इसमें भू-माता का क्या दोष? ऐसी स्थिति के लिए शक्तिशाली धनिक, विचारक, प्रचारक सभी लोग जिम्मेदार हैं। इनमें आपस में मेंलजोल न होने के कारण गाँव वीरान हो गया। अमीरों को लगता है। की यह काम अपना नहीं है। उत्पादन के प्रति गरीबों में प्रेम नहीं है और मेंहनत करने में शिक्षित लल्ला का अनुभव करते हैं। मेंहनत करना शिक्षितों

को अपमानास्पद लगता है, इसी से गाँव में ढिलाई आ गई। सभी इस तथ्य को समझ ले। आगे ऐसा ना हो, इसलिए सभी से आग्रहपूर्वक हमारी बिनती है की जिसे जो काम आता है, वह सेवाभाव से करके अपनेसहित गाँव का भी गौरव बढ़ाए। जो रोजीरोटी का काम न कर उत्पादन बढ़ाता नहीं है। उसका गाँव के विचारक लोग विरोध करे। सभी में श्रम के प्रति आत्मीयाता निर्माण हो। श्रम निष्ठा का ऐसा प्रचार करके अपने गाँव का उत्पादन बढ़ाने की उचित व्यवस्था निर्माण करे। [77]

उच्च शिक्षा से क्या तात्पर्य है?

श्रोता ने प्रश्न पूछा की, शहर की तुलना में हम गाँवों को महान् मानते हैं, किंतु शहरों में जो उच्च शिक्षा मिलती है, वह गाँव में नहीं मिल सकती है। साथ ही हमें यह नहीं भूलना चाहिए की शहर में पढकर कोई गाँव में आता है, तो गाँव के गॅंवारों के सहवास में वह भी मूर्ख-गॅंवार बन जाता है। गाँव में रहकर वह हल धनेवाला हलधर ही बनेगा। इसलिए विद्यार्थियों को शिक्षा के लिए शहर में जाना चाहिए। (वहीं राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज कहते हैं) श्रोताओं, जिन लोगों की ऐसी भावना है, वे ध्यान से सुने की हमारी शिक्षा विषयक मूल संकल्पना ही गलत है।

बाप की शिक्षा जहाँ बच्चे के काम नहीं आती, बाप खेती करता है। और लडका नौकरी के लिए घूमता है। ऐसी अजीबोगरीब शिक्षा-प्रथा हमें नहीं चाहिए। बडा बाबू बनना, कम काम में अधिक पैसा कमाना, दिखावी ऐंट और बड़ी उपाधि प्राप्त करना- ये मनुष्य की श्रेष्ठता के लक्षण मत समझे। यह बस भूलकर बच्चों को गाँव का गौरव बढ़ाने की शिक्षा दे। पिछली पीढी में सभी काम करके मर गए। अब सिर्फ उच्च शिक्षा से काम नहीं बनेगा। इसलिए अब शिक्षा से तैयार होनेवाला भारत का सुपुत्र मेंहनती ओर बलवान होना चाहिए। शिक्षा में ही जीवन जीने के साधनों को अंतर्भुत

---

[77] अमोल कडवे, (15 दिसम्बर 2000), पृष्ठ47,48

करे। ताकी छात्र को भोजन की चिंता करने की आवश्यकता न पउे अथवा उस पर भीख माँगने की नौबत न आए। [78]बच्चे में कम से कम एक गुन तो ऐसा हो, जिससे वह अपना पेट भर सके एवं उसकी गृहस्थी में कोई अडचन न आए। जीवन की सभी आवश्यक जरूरतों एवं जीविका की हर बात से संबद्ध विषयों के संपूर्ण ज्ञान का समावेश उसकी शिक्षा में होना चाहिए। नदी, तालाब, कुआं आदि में हर तरह से तैरना- जैसी संकट की घड़ी में लोगों की सहायता कर सकनेवाली शिक्षा होनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर गाँव में भोजन बनाने की कला भी लडकें-लडकीयों को सीखानी चाहिए। यह शिक्षा दिखती है साधारण, किंतु जीवन में इसका ही अग्रस्थान है। अन्यथा बिना भोजन के जानवरों के समान गुजारा करना पड़ेगा। लडकी स्कूल में खूब पढी-लिखी, लेकिन उसे घर में भेजन ही बनाना न आता हो, तो वह होशियारी कीस काम की? अनपढ खाना बनाकर खाए और शिक्षित चने चबाता बैठे। रस्सी में गांठ भी न मार पानेवाला बनुश्य हर जगर पराधीन ही होता है। लडके को पंगत में परोसना नहीं आती, पानी भरना नहीं आता, वह अपनी ही ऐंट में रहता है, ऐसा यह ज्ञान पूर्णतः व्यर्थ है। घर में जो कमी हो, उसे तत्परता से काम करके दूर करनेवाली शिक्षा ही काम की है। जीवन को सफल बाने के लिए शिक्षा के माध्यम से लीनता, आत्मनिर्भरता, आजादी, निर्भयता एवं दृढनिश्चय जैसे गुन वृद्धिगत होने चाहिए।[79] शिक्षा कायर बने के लिए नहीं है, तो जीवन सुंदर बनाने के लिए उसकी आवश्यकता है। गाँव पर गुंडों का हमला हुआ, तो सभी छात्र खिडकीयाँ बंद करके बैठेंगे और गुंड़े पिताओं की इज्जत लुटे ऐसी शिक्षा कीस काम की? इसलिए कुश्ती, मलखांभ खेलनेवाले एवं साहसपूर्वक प्रतिरोध करनेवाले बलवान बच्चें चाहिए। वही शिक्षा उपयुक्त है। बौद्धिक शिक्षा के साथ जीवन शिक्षाण मिलने के लिए ऋषियों के काल में गूरूकुल आश्रमों की व्यवस्था थी। धनुर्विद्या,

---

[78] अशोक बाचुलकर,(02 नोव्हेंबर 2014),ग्रामगिता, पृष्ठ 49,50

[79] अमोल कडवे,(2002), राष्ट्रसंताची जपान मधील भाशने , पृष्ठ63,64

मल्लविद्या, आयुर्वेद, शस्त्रास्त्र-विद्या जैसी उत्तमोत्तम चैदह विद्याएं एवं चित्रकारिता, चर्मकला, रंगोली, बॅसोर, कुम्हार काम आदि चैसठ कलाएं आचार्य छात्रों को सीखाते थे। संगीतशास्त्र, पाकशास्त्र, गृहशास्त्र, अश्वपरीक्षा, रत्नपरीक्षा आदि सी जीवन कलाएं शिक्षा के माध्यम से सीखाई जाती थी। ऐसी पुरानी परंपरा थी, किंतु अब लडका उच्च शिक्षा लेकर आता है। फिर उसे घर में उपलब्ध साजो-सामान से अपनी खेती-बाड़ी भी नहीं करने आती है। शिखा की संपूर्ण व्यवस्था वैभवशाली शहरों में होने के कारण अब बच्चों का गाँव में मन नहीं लगता। उच्च ज्ञान का दैनिक जीवन में कैसे उपयोग करना है, यह भी वह नहीं जानता है। इससे अच्छा है की उच्च ज्ञान के विद्यालय गाँव में खोले, ताकी गाँव के सभी को शिखा मिलेगी और गाँव का जीवन भी सुधर जाएगा। जिनके माध्यम से बच्चों में र्ती, लक्षिश्ठा बढेगी ऐसी अनेक कलाएं सीखाए। वह अपने गाँव का सॅंभाल कर सके ऐसी शिक्षा उसे दी जाए। **80**[80] गाँव आदर्श कैसे बनेगा, इसकी शिखा देकर बच्चे को सक्रियता से विद्यार्जन के लिए प्रवृत्त करे। एक-दूसरे के बीच सहयोग की प्रबल भावना निर्माण करना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। उसके बिना शिक्षा का कोई महत्तव नहीं है। परस्परपूरक रहने में ही शिक्षा का वास्तविक सन्मान है। व्यक्ति-स्वार्थ के कारण मनुष्य जीवन में अत्यधिक दुख भेगने पडेंगे। जनसेवा के प्रमानपत्र को सभी जगहों पर महत्त्व मिले एवं आज के लडकें-लडकीयों को कल का राष्ट्रमानकर उनकी उन्नति की जाए।

---

[80] सुदाम सावरकर, संक्षिप्त जीवन दर्शन,(ग्रामगीता) पृष्ठ49,50

पुत्रधन की निगरानी एवं बच्चों की परवरिश का कार्य

पुत्रधन नहीं गाँव का मुख्य धन है। अतः अनके षील की रक्षा करने से, उनके उज्जवल चरि? से गाँव की महिमा बढेगी। हमें जिस तरह का गाँव बनाना है, वैसी ही शिक्षा बच्चों को देकर उनहें सुजान बनाए। बचपन में ही उचित शिक्षा दी जा सकती है। उमें बडने पर कठिनाई होगी और बाद में कुछ भी करने पर उनकी आदतें नहीं छुटेगी। फिर वह अंगूठा छाप रहेगा ताकी उसे कोई भी फंसाएगा। अंधे की तरह वह जिंदगी भर कष्ट -पीडा सहन करता फिरेगा और उसकी उन्नति के सभी द्वार बंद होकर, पूरी जिंदगी हमाली करने में ही बीत जाएगी। अच्छा किसान होने पर भी उसे खेती का नवीन ज्ञान, नया सुधार समझ में नहीं आएयगा। खेती के औजारों तथा पैदावार में कुछ सुधार न होने से कोल्हू के बैल जैसी उसकी दुर्दशा हो जाएगी। [81]

जिस प्रकार बच्चे को जन्म देना कर्तव्य है, उस प्रकार उसे शिक्षा देना भी जरूरी है। अतः पिता अगर बच्चे को शिक्षित नहीं करता है, तो वह भी पाप का भागीदार बन जाएगा। खुद से अगर बच्चे की शिक्षा की व्यवस्था नहीं होती है, तो उसे किसी देशोद्धारक संस्था को सौंप दे, किंतु उसे अनपढ मत रखे। माता-पिता को चाहिए की बच्चे को हमेंशा अपने पास न रखे, बल्कि जहाँ बच्चों के रक्षक होंगे ऐसे किसी बाल विद्यालयय में उसे भेज दे। जन्म देने का काम माता-पिता का है और शिखा देने का काम गुरूजनों का है। अपनी आसक्ति एवं लाड-प्यार के कारण देश का पुत्रधन मत बिगाड़े। मां-बा पके लाड-प्यार से बच्चों के हठ पूरे होते हैं, किंतु अधिक लाड-प्यार उन्हें निकम्म और बुद्धू बना देता है। [82]

---

[81] गुरुकुंज आश्रम, श्रीगुरूदेव 'मासिक', पृष्ठ55,56

[82] रघुनाथ कडवे, 1942 चा चिमुर क्रांतिसंग्राम, पृष्ठ61,62

ये सारी बातें अध्यापक-अध्यापिकाओं के सामने नहीं चलती। बच्चों को कैसे बहलाना है, इसका मनोविज्ञान उन्हें भली-भांति ज्ञात होता है। इसलिए पूरा गाँव मिलकर शिषुसंगोपन शुरू करे। इसके लिए गाँव की औरतों को प्रशिक्षित करके नियुक्त किया जाए। गाँव में ही पाठशाला, बालोद्यान, बच्चों का शिषुसंगोपन केंद्र शुरू करके बचपन से ही बच्यों को वहां रखे और उन परे अच्छे संस्कार करे। काम के कारण मां-बाप को पुर्सत नहीं मिलती है। परिना मतः बच्चों की होने वाली दयनीयता, ऐसे विद्याश्रमों के कारण नष्ट होगी।

शिक्षक, शिक्षा एवं छात्र

बाल-बच्चों का संगोपन कैसे करना है एवं उन पर कीस प्रकार के काम सौंपने है, इसकी शिक्षा बाल मंदिर के अध्यापकों को दे दे। छोटे बच्चों को किसी भी प्रकार की लत न लगे। अगर ऐसा होता है, तो उसके अभिभावक तथा अध्यापकों की तलाशी ली जाए। वरना शिक्षा लेकर भी वह सनकी बना, तो समझा की हम भी फँस गए और दूसरों को भी फंसाया । अन्यथा मैं शिक्षा क्षेंत्र में आकर बच्चों का अध्यापक बना और मुझे ही बहुत सारे व्यसन हैं, फिर भरी मुझे शरम नहीं आती। बच्चों को सदाचारी रहने के लिए कहकर खुद बीड़ी पीने में समय गॅवाता है और फिर गरमी से रेलगाड़ी जैसी भद्दी आवाज में बातें करता है। गाँव के दायित्त्वों को पहचानकर अध्यापक अगर आत्मीयता से मेंहनत करता है, तो गाँव स्वर्ग बन जाएगा। फिर किसी की भी आवष्यष्कता नहीं पड़ेगी। घर-बाहर उत्तम ताकी आवश्यक ऐसी शिक्षा मिलने पर गाँव के विकास का श्रेय अध्यापकों को ही मिलेगा। जीवन विकास एवं अपने गाँव की सुंदर रचना करने की शिक्षा बच्चों को दे। लडकें-लडकीयों को साक्षर बनाने तथा काम करने के लिए तत्पर बनाने के लिए गाँव में एक सुंदर पाठशाला हो। उत्कृष्ट गाना, बोलना, आचरन, ढंग से रहना ताकी आत्मनिर्भरता आदि की शिक्षा बच्चों को देने पर उनकी बेहतरीन प्रगति होगी। वे उत्तम छात्र बनकर भविष्य में बड़े-बड़े उद्योग-व्यवसाय सीखेंगे।

बच्चें प्रत्यक्ष कार्य मके माध्यम से गणितशास्त्र आदि सीषे। ऐसा न हो की बहुत पठन-पाठन करने पर भी खुद कुछ काम न कर सके। [83]

इसलिए बच्चों से पढ़ाई के साथ ही जीवन के सभी काम करने की सक्रिस तैयारी करा ले। आगे जिस विषय में उसकी रूचि है, उस विषय की विद्या में अध्ययन एवं अनुसंधान करने के अवसर उसे उपलब्ध करा दे। इस प्रकार जीवन एवं शिक्षा का गठबंधन कराके, प्रारंभ से ही बच्चों को सवागृंगीन शिक्षा दे। उसे जीवन की हर एक महत्त्वपूर्ण चीज की शिक्षा दे और एकाध महत्त्वपूर्ण उद्योग भी सीखाए। ताकी कोई भी अच्छा काम करते वक्त उसे शरम न आए। दिखने में शिक्षित, पर हर काम में कुशल एवं खेत में बोआई, निराई, जुताई करनेवाला और गोबर उठाने के लिए भी लायियत ऐसा काम करने में शरम महसूस न करनेवाला लडका हो। [84]

ऐसे सभी प्रकार के काम कर सकनेवाला लडका तैयार हो जाने के कारण गाँव का मान बढेगा। बच्चों के अज्ञान के समय गाँव उनकी अच्छी परवरिश करता है, तो गाँव का भी सहज ही उत्कर्ष होगा। इस प्रकार अठारह सालों का पाठ्यक्रम पूरा करते ही, वह हजारों पीढीयों का ऋन चुकाएगा और गाँव का आदर्श नागरिक बनेगा। जीवन की सभी उज्ज्वल बातें बच्चे अगर मन लगाकर सीखेंगे, तो गाँव का रंग-रूप एवं नक्षा ही बदल जाएगा।

---

[83] रमेंश गुप्ता,(आष्टीचा स्वातंत्र्य संग्राम,1942) पृष्ठ87,88

[84] डॉ भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ, पृष्ठ93,94

पिछडों को ज्ञानदान पुण्यप्रद

कुछ लोग कहते हैं की जिस बच्चे की जाति ही मूरख है, वह बुद्धिमान कैसे हो सकता है? कारण कुछ बच्चे जन्मतः ही बुद्धिमान होते हैं। यह धारण पूर्णतः गलत है। मूलतः कोई भेद नहीं होता है, तो वह परंपरागत वातावरण की वजह से होता है। एक का बाप बुद्धिमान क्यों न होगा? आसपास बुद्धिमानों का जमाव, खाने में सत्तवयुक्त मेंवा और घर-बाहर अच्छा सहवास जिन्हें मिलता है, उनकी उन्नति निश्चित है। एक का बाप चरवाहा है, जो लकड़ी की गठरी लाता है, उसका चाचा चूडियाँ-कंचुकी बेचता है, मामा सरकारी नौकरी करता है, जो चपरासी है। उसे खाने के लिए मोटा-झोटा और संगति गाय-गोरू की हो, फिर भी वह अगर पढ़ाई में थोडा तेज हो, तो उसकी तारीफ क्यों न करे? ऐसों को उत्तम सहवास देकर उनका जीवन स्तर बढ़ाने से नियों का नव समाज निर्माण होगा। यह सब होने के लिए ही शिक्षा की आवश्यकता है। बिना शिक्षा के भाषण भी निरर्थक है, यह बात जब समझ में आएगी, तथी लोग शिक्षित बनेंगे। अन्यथा पुरखों ने शिक्षा न देने की जो मूर्खता की है, उसके कारण उनके बच्चों को जीवनभर यातनाएं भुगतनी पड़ती हैं। और इसमें जल्दी सुधार न होने के कारण पूरे कुल पर वह दोश लगता है। **85** [85]

खानदान में कोई एक पाप करे और पीढी दर पीढी सभी सजा भुगतते रहे, यह सिर्फ लोगों की उस प्रवृत्ति के कारण चलता आ रहा है। अतीत में लगा कलंक मिटाने के लिए भविष्य में अच्छे पुण्यमय काम करने पड़ते हैं। तभी खुद पर लगा कलंक मिट जाता है। किसी एक ने सदाचरन करके ख्याति अर्जित की हो और भविष्य में उसके बच्चें शरारती निकले, तो भी उसकी ख्याति में कोई फर्क नहीं पड़ता है। लोग पूर्व की ख्याति के कारण जानते हैं, इसलिए हर एक अपनी पीढी में पहले हो गए

[85] 20) विश्व बाल कृष्ण पर्वत, (2 ऑक्टोबर 2007), पृष्ठ52,53

कीर्तिमान लोगों की ओर इशारा करते है। जबकी पहले की ख्याति से अधिक पाप जमा होकर, उसकी चर्चा हुई, तो कोई अपने पुरखों की तारीफ नहीं करेगा। **86** [86]

मौलिक स्त्री-विशेषताएं

घर के काम-धाम ढंग से करने और घर में किसी के आने-जाने पर उसकी व्यवस्था करने में आनंद मानना एक सुजान महिला के लक्षण हैं। स्वतः कष्ट उठाकर सेवा करना, छोटे-छोटे काम भी बड़े प्यार से करना, ठीक से और परेशान हुए बगैर कैसे काम करना है, यह एक महिला कही जानती है। पुरुष जितना नहीं समझ सकता है, उससे अधिक गहरा ज्ञान महिलाओं को होता है। इस प्रकार उसके भावनारूपी गंगा का यशोगान मेरे लिए कठिन है। सभी विषयों में एकाग्रता और ममतापूर्वक सभी से एकरूप होना उसके लिए ही संभव है। वह जो कुछ भी तय करती है, वह पूरा ही करती है। संसार में अनेक प्रकार के जीव हैं। उनके स्वभावगुन सभी को मालूम है। उनमें से अनुराग का गुन माँ जैसा किसी में नहीं है। यही उसके स्वभाव का गौरव है।[87]

ईश्वर ने निर्माण की हुइर्द इस सृश्टि के पेट में कीतनी ही (जीवों की) खदाने होंगी, परंतु माँ जैसा अनुराग अन्यत्र कहीं भी नहीं मिलेगा। माँ के सहज स्वभाव को ही संसार में मानव धर्म कहा गया है। माँ की अपार ममता के कारण ही ईश्वर पर प्रेम करने की भावना लोगों के मन में उपतजी है। संतों ने माँ का रूप ले लिया, इसीलिए वे देवत्व प्राप्त कर सके। अन्यथा उसके बिना अनेक कोशिषें करने पर भी देवरूप प्राप्त नहीं हो सकता है। यह ममत्व स्त्रियों में सहज एवं जन्मजात होता है। उसके समुचित

---

[86] अशोक बाचुलकर, (9 जुन 2015), गुरुकुंज, पृष्ठ97,98

[87] अमोल कडवे, (15 डिसेंबर 2000),पृष्ठ77,78

विकास के लिए स्त्री को उत्तम शिक्षा की आवश्यकता है। स्त्री की सजगता बड़ी अजीब है, पुरुष का उधर ध्यान भी नहीं जाता है।[88] यह शिक्षा बालबच्चों को दी जाने पर ही गृहस्थी सुचारू चलेगी। पुरुष केवल प्रत्यक्ष को महत्त्व देता है, जबकी स्त्री सजगता एवं करूना की मुर्ति है। इन दोनों के दो गुणों का स्वभाव एकत्र आते ही धरती स्वर्ग बन जाएगी। उत्तम पुरुष और उत्तम स्त्री एकत्र आने पर उनकी गृहस्थी स्वर्ग समान होती है। उन दोनों की तुलना में पुरुष की अपरक्षा स्त्री कुछ ज्यादा ही उत्तम होती है।

परिस्थिती देखकर अनुमान लगाया मनुष्य स्वभाव है, परंतु भविष्य पर दृष्टि रखकर नीति निर्धारित करना महिलाओं की विशेषता है। इसलिए स्त्री के पास भक्ति और ज्ञान है तथा वह अधिक चतुर है। इसलिए लगता है की संसार को वही चलाती है। इसका मतलब यह नहीं है। की पुरुषों का बिल्कुल महत्तव नहीं है। मैंने स्त्रियों के सहज स्वभाव के बारे में बताया है। यह सब जो मैंने स्त्रियों के सहज संदर्भ में कहा है, वह मेंरी भावना पर आधारित है। कारण गृहस्थी के प्रत्यक्ष सुख-दुख मैंने अनुभव नहीं किए हैं। वस्तुतः मेंरी गृहस्थी संपूर्ण विश्व है। सभी स्त्री-पुरुष माता-पिता हैं। मैंने वही कहा है, जो व्यावहारिक दृष्टि से मुझे उचित लगा।[89] यह सब कहने का तात्पर्य है की स्त्री को कहाँ दूर रखना है, माता के रूप में उसकी पूजा कब करनी है, कहाँ सखा रूप में उसके साथ व्यवहार करना है, देवता के रूप में उसे कहाँ पूजना है और शत्रु के रूप में उसे कहाँ देखना है। यह सब स्थल- काल एवं योग्यता के अनुसार सोच-विचारपूर्वक करे। जिनके पास यह समझ नहीं है, तब घर की स्त्री ही उसका मार्गदर्शन

---

[88] सुधा,(02 नोव्हेंबर 2000), श्री. सिंधु के लहरे(पुर्वाध),पृष्ठ 97,98

[89] अशोक बाचुलकर, (02 नोव्हेंबर 2014), ग्रामगिता, पृष्ठ75,76

करती है। अनेक घरों में कई प्रसंगों में मैने यह अनुभव किया है। जिस-जिस घ में मैंने ध्यानपूर्वक देखा, वहां-वहां मुझे पुरुष की अपरक्षा सभी में ही चतुराई अधिक दिखी।

परिस्थिति देखकर अनुमान लगाना मनुष्य स्वभाव है, परंतु भविष्य पर दृष्टि रखकर नीति निर्धारित करना महिलाओं की विशेषता है। इसलिए स्त्री के पास भक्ति और ज्ञान है तथा वह अधिक चतुर है। इसलिए लगता है की संसार को वही चलाती है। इसका मतलब यह नहीं है की पुरुषों का बिल्कुल महत्त्व नहीं है। मैंने स्त्रियों के सहज स्वभाव के बारे में बताया है। यह सब जो मैंने स्त्रियों के सहज संदर्भ में कहा है, वह मेंरी भावना पर आधारित है। कारण गृहस्थी के प्रत्यक्ष सुख-दुख मैंने अनुभव नहीं किए हैं। वस्तुतः मेंरी गृहस्थी संपूर्ण विश्व है। सभा स्त्री-पुरुष माता-पिता हैं। मैंने वही कहा है,त्र जो व्यावहारिक दृष्टि से मुझे उचित लगा।[90]

यह सब कहने का तात्पर्य है की स्त्री को कहाँ दूर रखना है, माता के रूप में उसकी पूजा कब करनी है, कहाँ सखा रूप में उसके साथ व्यवहार करना है, देवता के रूप में उसे कहाँ पूजना है और शत्रू के रूप में उसे कहाँ देखना है। यह सब स्थल-काल एवं योग्यता के अनुसार सोच-विचारपूर्वक करे।

स्त्रियों की अनवस्था मेंन राष्ट्र की दुर्गति और स्त्री सामर्थ्य

कुछ लोग इकतरफा विचार करके स्त्री जाति को न पहचानकर उसकी अक्षम्य उपरक्षा करते हैं। उन्हीं के कारण समाज का घोर पतन हुआ है। स्त्रियों को हीन तथा दुर्बल बनाए जाने से उसकी संतान भी वैसी ही बन गई। परिना मतः समाज भी हीन तथा दुर्बल बन गया। कुछ लोग स्त्री को मात्र पशु ही समझते हैं। अतः संपूर्ण दुनिया अनायास ही पशुवत हो गई। किसी ने स्त्री को अपनी भोगवस्तु समझकर गुडिया की तरह उसे सझाकर रखा। इससे घर-घर में कली घुस गया और यह माँ मातृभूमि

---

[90] रूपराव वाघ,(1999), पृष्ठ71,72

अबला स्त्री की तरह बन गई। [91] सुजान व्यक्ति का स्वार्थवश ऐसा कहना बिल्कुल अनुचित है की स्त्री सदैव गुलाम ही है तथा अपनला उद्धार करने का उसे कोई अधिकार नहीं। स्त्री को अपने मार्ग में बाधा समझकर उसकी उन्नति में बाधा डालकर लोग अपना ही नुकसान कर लेते हैं। वस्तुतः दोनों ही अपने-अपने संस्कार से जन्म लेते हैं और उन्नति भी करते हैं। अंततः उसका उद्धार भी उसी के हाथों में होता है। पुराणों में देखिए-क्या देवताओं ने देवियों को अलग रखा? ऋषियों नें क्या पत्नी को नहीं सँभाला? क्या स्यित्रों में सत्त्वषील नहीं हैं? क्या स्त्रियों ने वेद नहीं लिखे? क्या स्त्रियों ने ब्रह्मवाद नहीं किया? कई स्त्रियाँ अनेकविध प्रकार की विद्या-कलाओं में निपुन थी। क्या स्त्रियों ने युद्ध नहीं किए? पति-पुत्रों को रणांगन में जाने के लिए क्या उन्होंने प्रोत्याहित नहीं किया? अपने व्रत की रक्षा हेतु क्या उन्होंने प्राना र्पन नहीं किया। [92]

स्त्री शिक्षा की आवश्यकता एवं स्त्रियों के मौलिक अधिकार

अतः उसे वैसी सीख दे, सुसंगती में रखे, उत्तम शिक्षा दे तथा उसके साथ वैसे ही संबंध सदैव बनाए रखे। बचपन से ही उसे उत्तम चाल-चलन, रहन-सहन कार्य में चपलता, जीवन में सजगता सिखाए। कुछ स्त्रियाँ शारीरिक बल की शिक्षा लेकर पुरुषों से भी अधिक साहसी बनती हैं। इतनयी की उनहें छूने का भी साहस गुंडों को नहीं होता है। ऐसा होते हुए उसे परदे में रखने की क्यका आवश्यकता है? दूसरों पर निर्भर रहने का परावलंबित्व कीसलिए? अपनी आत्म सामथ्र्य से ही

---

[91] हरीभाऊ वेलुरकर, (2014), साधु सिंध की लहरे, पृष्ठ98,99

[92] रूपराव वाघ,(2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य, राष्ट्रीय साहित्य प्रकाशन,

स्त्रियाँ दानवों का संहार करती है, परंतु इस विचार की तरफ दुर्लक्ष करके पुरुष खुद को अक्लमंद समझते हैं और स्वार्थवश स्त्रियों का जीवन नीरस बनाते हैं। [93]

कुछ लोग विवाह होते ही चूल्हा-चैका और बच्चों के लालन-पालन में स्त्री को इतना उलझाए रखते हैं की ठीक से बात करने की फुर्सत उसे नहीं होती है। कुछ लोग उसे घर में इस प्रकार कैद करके रख देते हैं की जन्म से ही दुनिया से उसका संपर्क न हो। कुछ पल के लिए भी अगर वह बाहर आती है, तो मार-पीटकर उसे सीधा करते हैं। लडकीयाँ घर में छिपी रहे और लडकें गाँव में इधर-उधर घूमें- फिरे जैसे गलत रस्म-रिवाज हमें बिल्कुल पसंद नहीं हैं। अरे, वह तुझसे अच्छा बर्ताव करती है, समाज में अच्छा भाषण देती है और तुम्हें भी अक्ल सीखाना जानती है, फिर वह पीछे क्यों? ऐसा होते हुए भी तथा वधु-वर को समान हक होते हुए भी लडकीयों को दबाए रखना आज के युग में अनुचित है।

दोनों को भी पवित्र रखने का सूत्र ईश्वर ने निर्माण किया है। लडकों ने विशेष ऐसा क्या किया है की संसार में वे ही आगे रहे? मान-मराबत में स्त्री पीछे, विधवा होने पर उसे पुनर्विवाह की अनुमति नहीं और जीवनयापन का भी अवसर नहीं। यह भेदभाव कीसलिए? कुछ विधवाओं का मुंडन कराके उन्हें कुरूप बनाते हैं, परंतु यह समझ में नहीं आता है की इससे संन्यस्त वृत्ति कैसे प्राप्त होगी? ऐसा वंदनीय महाराज कहते हैं। अपनी दुर्बलता छिपाकर दूसरों की फजीहत करना, छलना यह दानवी दुश्टता ही है, जो मनुष्य को शोभा नहीं देता है। विधवा अगर संन्यास लेना चाहती है, तो उसे बन या आश्रम में रखे। उसे से शिबिर में स्वेच्छा पूर्वक अध्ययन करने दे।[94]

---

[93] ग्रामजागृती भजनावली, पृष्ठ76,77

[94] अमोल कडवे,(2002), राष्ट्रसंताची जपान मधील भाशने ,पृष्ठ87,88

हम मजे में खाए-पीए, मनपसंद आभूषण पहने और उसे आजीवन दुख में रखे। इस सबसे उस विधवा को चिता में जल जाना ही अच्छा लगता है। स्वभाव से उदास सभी गृहस्थी से अलिप्त रहकर परमार्थ का अध्ययन उसे करना चाहिए। अन्यथा उसे मात्र कुरूप बनाने से क्या लाभ होता है, यह मेंरी समझ से परे है। विधवा होने पर उसे अपशकुनी समझना, जन्म लेने पर अभागन अथवा दुर्दैवी समझना और विवाह में विलंब होने से वयस्क बनने उ?पर उसे षूद्र समझना हमारे समाज की धृश्टता ही है। जिस प्रकार पुरुष ब्रह्मचारी रह सकता है, उसी प्रकार स्त्री भी कुमारी रह सकती है। इसलिए इसमें से अधिकार न्यूनत्व की भावना मिटा दे।

स्त्री जाति के लिए ही संतती नियमन हो और पुरुष के लिए मात्र कोई नियम ना हो। इस प्रकार का आग्रह अनुचित है। नियम और अभ्यास दानों के लिए समान हो। सामाजिक दुख का अहसास दिलाकर दोनों का भी दुश्टिकोन व्यापक बनाए। समाज में जिस प्रकार पुरुषों का आदर होता है, वैसा ही आदरपूर्वक व्यवहार महिलाओं के साथ हो, वरन् उससे भी ज्यादा। यहीं समाज की गलती हो गई की एक को अधिक महत्त्व देकर दूसरे को दबाया गया। उसी के दुष्परिणाम कई जगहों पर हम देख रहे हैं। बावजूद इसके आज भी लडकीयां को उचित शिक्षा देने की तरफ विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। ढोरां के चारागाह की तरह वह केवल उपभोग की वस्तु बन गई है। यह सब समझा-बुझाकर स्थान-स्थान पर लडकीयां और महिलाओं को शिक्षा देकर परिवर्तन और जनजाग्रति करने से गाँव का शासन जीवित रहेगा।

स्त्री शिक्षा की यथार्थ दृष्टि एवं महिला संगठन

बुद्धिमानों को चाहिए की पुरुषों की तरह महिलाओं के उत्थान के लिए गाँव में सब प्रकार की व्यवस्था करे। पुरुष और, नारी, दोनों का कार्यात्मक विकास जब होगा, तथी गाँव की उन्नति होगी और गाँव में स्वर्ग उतर आएगा। महिलाओं को अगर उनके आंतरिक गूणों का विकास करनेवाली शिक्षा दी जाती है, तभी भावी दुनिया का रूप बदलेगा। महिलाओं को उच्चतम शिक्षा दी जाए, शिक्षा

में जीवन का स्थान हो और उसमें शांति, दया आदि सद्भावनाओं का समावेश हो। जो समाज का विकास चाहता है, वह लडकीयों को कम से कम लिख-पढने इतनी शिक्षा तो अवश्य दे । ढंग से रहना, गाना, बोलना और आचरन उसे सीखाया जाए। जिससे घर देखते ही वहां की महिला कैसी है, यह समझ में आ जाएगा। बेटियों को शिक्षा देना माँ-बाप का प्रमुख कत्र्तव्य है। इसी से वे देश का कर्ज चुका पाएंगे। मैंने देखा है की लडके काफी पढ-लिखकर यांत्रिक तथा कारीगर बन जाते हैं, परंतु लडकीयों की शिक्षा की स्थिति मात्र व्यवस्थित नहीं है। (वहींमहाराज कहते है) ऐसा न करके समाज में लडकों को जिस प्रकार विविध ज्ञान देते हैं, वैसे ही लडकीयों को दे दे। उनके दर्जे एवं सम्मान में समानता रखे तथा उनकी उपेक्षा नार हो, इसका खयाल रखे। लडकीयों की शिक्षा अलग हो, स्त्री-पुरुषों के उद्योगधंधे भी अलग-अलग हो। जहाँ दोनों का संबंध आता है, वहां फिर कठिन स्थिति निर्माण होती है।[95] तथा सोच-समझकर जो भी किया जाता है, उसमें योजनाबद्धता होती है। मात्र विचारपूर्वक न करने से मोह उपजता है और अंततः खतरा मोल लेना पड़ता है। अतः इसका तारतम्य रखते हुए उन्हें शिक्षा दे। रथ के दोनों पहियों की तरह समाज की दोनों बाजुएं स्त्री-पुरुष को समान उन्नत करके शक्ति एवं युक्ति से संपूर्ण गाँव में चैतन्य भर दे। मन में सदैव भय रखकर स्त्री-पुरुषों की शिखा का स्थान अलग रखन पर भविष्य में जब वे एक-दूसरे के सहवास में आएंगे तब उनका स्वभाव कौन बदलेगा? स्त्री-पुरुष में एक-दूसरे के प्रति बनी विकृत कल्पनाएं उनमें भ्रम पैदा करेगी। इसलिए उचित संबंधों द्वारा उनमें भाई-बहन का नाता दृढ करे।[96]

नैतिकता एवं शील की सीख देने की व्यवस्था शिक्षा में ही की जाए। अतः एक-दूसरे की उपरक्षा नहीं होगी अथवा वे एक-दूसरे से दूर नहीं होंगे। दोनों को भी अपने-अपने षी का अहसास होगा, तथी अनर्थ से बचा जा सकता है। अन्यथा पिंजड़े की तरह भौतिक दृष्टि से भिन्न होने के बावजूद एक-दूसरे

---

[95] अमोल कडवे,(2002),राष्ट्रसंताची जपान मधिल भाशने ,श्री.गुरूदेव, 87

[96]) सुदाम सावरकर, संक्षिप्त जीवनदर्शन(ग्रामगीता). 59

को लेकर उनके मन में उलझन पैदा होगी। लडके-लडकीयों का सहपाठी बनकर शिक्षा ग्रहन करना गलत नहीं है, अगर उनमें नैतिकता का भाव जागृत हो। यह सावधानी बरतने का काम नेताओं और पिताओं का है। अपने शरीर और मन का ख्याल रखते हुए बालबच्चों को शिक्षा में प्रवीन बनाए। अपने व्रत की रक्षा करन इतनी शूरता उनमें अवश्य हो।

जब पुरुष का पतन (विकारवश) हो है, तब स्त्री-प्रकृति वह सहन नहीं कर पाता है। ऐसी स्थिती में सुधारना के लिए महिलाओं का भी स्वतंत्र संगठन हो। सुख-दुख की अपनी भावनाएं वे सभा-सम्मेलनों में प्रकट करे। पुरुषों का जैसे नई शक्ति देनेवाला स्फूर्तिस्थान होता है, उसी प्रकार महिलाओं का भी उन्नति भुवन हो। जिसमें उनके सभा, प्रार्थना कथा-कीर्तनादि सभी कार्यक्रम होंगे। जातीय भेदभाव भूलकर सभी महिलाएं एकत्र आए और हल्दी-कुंकुम, शारदोत्सव तथा सहभोजन आदि कार्यक्रम करे।[97]सुशील एवं साध्वी पतिव्रताओं के जन्म तथा स्मृति दिवस के अवसर पर उत्सव मनाए जाए। महिला विभाग के लिए पुस्तकालय आदि कार्य स्थान-स्थान पर चलाए। उनकी उन्नति का सम्मान होने तथा उनमें प्रतिकार का अहसास होने के लिए उनके स्वतंत्र मेंले तथा समुदाय हो। श्रोताओं से मैं कहना चाहूँगा की स्वतंत्रता एवं सुख के जो साधन पुरुषों के लिए हैं, उनमें कोई अंतर न करते हुए वे सभी महिलाओं के लिए भी हो। पुरुषों के लिए सबं सुविधाएं और महिलाओं के लिए सब कष्ट , ऐसा जिस किसी शास्त्र में लिखा गया है, उसे फेंक देना चाहिए।

पुरुष की काफी उन्नति हो गई, और स्त्री को कुछ भी न आता हो, तो वह गाँव पूर्णतः एकांगी और संकीर्ण बन जाएगा। ऐसे गाँव की दुर्गति होगी और उस परेशानियाँ झेलनी पड़ेगी। इसलिए रथ के दोनों पहिए (स्त्री-पुरुष) खरादकर मजबूत बनाए, तभी यह गृहस्थी की गाड़ी सुखपूर्वक आगे बढेगी।

---

[97] राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज, मराठी/हिंदी भजनावली, पृष्ठ59,60

माँ-बाप इस तरह आदर्श बनेंगे, तो वे आदर्श बालक को जनम देंगे। फिर वे बालक भारत देश को स्वर्ग बनाएंगे (ऐसा श्रीसंत तुकडोजी महाराज कहते हैं)।

अध्याय 5

तुकडोजी की आदर्श जीवन की संकल्पना

मानव जीवन कला

दूसरे को लक्ष्य बनाकर जीनेवाले अनस जीवों की तुलना में, दुर्बलों को सबल बनानेवाली मानवीय कला कुछ अलग है। पशु-पक्षियों की तरह नृत्य-गायन में निपुन होकर भी मनुष्य की मानवता सबसे भिन्न है। वह मकड़ी की तरह बुनता हैं, कोयल की तरह गाता है, मछली की तरह तैरता है, पंछी की तरह आकाश में उडता हैं, मधुमक्खी की तरह संग्रह करता है, चिंटियों की तरह कीलें बनाता है, गिरगिट की तरह क्षण-प्रतिक्षण रंग बदलता है, मयूर की तरह नृत्य करता है, तितली की तरह वेश धारण करता है, चिडियों की तरह आनंद से नीड बनाता है। इतनी सारी कलाएं साध्य होने पर भी मनुष्य की अपनी कला इन सबसे अलग है।

वह ढंग से रहता है, एक पाई भी व्यर्थ नहीं गॅवाता है। अपनी तरह ही सभी का पोषण करता है। सत्य -धर्म तथा मर्यादापूर्वक आचरन करने के कारण वह औरों से स्वभावतः ही भिन्न जान पड़ता है। सोच-समझकर चलता है, पतितोद्धार करता है, औरां के कल्यानार्थ करता है, वक्त पड़ने पर अपने प्राणों की आहुति भी देता है। अपने गाँव को ही अपना परिवार समझता है। किसी को अपना हिस्सा देता है और गाँव को ही अपना परिवार समझता है। किसी को भी दुख ना हो, ऐसा ही आचरन रखना उसे रात-दिन पसंद आता हैं। [98] ऐसे ही व्यक्ति को दूरदृष्टि तथा कार्य का मूल हेतु ज्ञात होता है और सभी व्यक्तियों की तरह संपूर्ण विश्व को सुखी करने के लिए वह अनेक कष्ट करता है। जो व्यक्ति ऐसा

---

[98] राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज, मराठी/हिंदी भजनावली.59

कार्य नहीं करते, वे शरीर से भले ही मनुष्य हो, परंतु कत्र्तव्य से पशु ही समझो जाए। जो अपने घर में है, वैसा सभी को मिले ऐसी मंगल कामना करनेवाले को ही 'मनुष्य' कहा जाए। वह अपना कला चातुर्य सभी के जीवन में प्रस्थापित करता है तथा अपनी कला द्वारा किसी की दुर्दशा अथवा शोषन नहीं करता है। उसकी कला 'कला के लिए' नहीं, बल्कि जीवन को भूशित करती है। ऐसा व्यक्ति स्वयं आदर्श बनकर अन्य व्यक्तियों से मधुर संभाषण करके अपनी मानवता प्रकट करता है।

कपट कला, सहजीवन कला और चित्कला

स्वार्थी हेतु से मधुर बोलने की कला अगर किसी ने अर्जित की भी हो, तो अंततः वह दिखावटी स्नेह दुख का कारण बन जाएगा। वैशयिक भाव से अगर कोई व्यक्ति दिखावा करती है, रंगभूशा करती है, तो भी उसकी अंतरंग कालिमा सं लोग परिचित हो जाएंगे। कोई चातुर्य कला, साहित्य तथा अभिनय आदि से विश्व को मोहित करता है तथा स्वार्थ के लिए समाज को दुर्दशा प्राप्त करा देता है। कुछ लोग कहते हैं की नृत्य-गायन-चित्रादि कलाओं का उउत्कर्ष करके उन्होंने मानव समाज का उन्नयन किया है। परंतु सत्य तो यह है की स्वार्थवश कला का बाजार लगाने के कारण मनुष्य संकीर्ण तथा हीन विचारों से ग्रस्त हो गया।

प्रत्येक कला-कौशल में सद्गुन का अंश होता है। फिर भी लोग वही त्यागकर केवल दुर्गुणों का स्वीकार करते हैं। इसका कारण यह है की जब कोई समझदार व्यक्ति प्रलोभन का शिकार हो जाता हैष् तब कला कीतनी भी उत्कृष्ट क्यों न हो, वह उपाय के बजाय अपाय ही करती है। उसे कला नहीं, बल्कि दुर्दैव कहा जाए। षृंगार नहीं, तो मृत्यु समझा जाए। मन का कपट समझने पर मीठी वाणी भी विशसमान प्रतीत होती है। मन के हीन भाव क्षण-प्रतिक्षण उभरते हुए देखकर कला-कौशल तथा प्रेममय वाक्कलापों से भी कुछ हासिल नहीं होता है।[99]

---

[99] गुप्ता रमेश, आष्टीचा स्वातंत्र्य संग्राम (1942),77

जो साधक इस दंभ को मन से निकाल फेंकने की कला आत्मसात करता है, उसी को सभी लोग सद्भावना पूर्वक सज्जन मानते हैं। उसकी प्रत्येक कला में निर्मलता आती है और अनुपान के कारण विश भी अमृत की तरह परिना म करता है। ऐसी मानवता की शक्ति वृद्धिंगत करनेवाली कला ही सर्वश्रेष्ठ कला है। मुख्य कला की पूर्णता के लिए तारतम्य की सर्वश्रेष्ठ कला है। अतः सभी की उन्नति के लिए सदैव सजग तथा तत्पर रहे। ऐसा होने पर सभी कलाएं अनुगमन करेंगी एवं समझ में न आनेवाली बातें भी समझ में आएगी और सर्वांगीन उद्धार की सद्बुद्धि ग्रापत होगी। जिससे कलाकारों की मृत्यु के पश्चात भी उनकी ख्याति विश्व में बनी रहेंगी।चौदह विद्याएं और चौसठ कलाओं के अध्ययन से अव्यवस्था ही उत्पन्न होगी। जो परोपकारी नहीं होता है, वह व्यर्थ अहंकार से स्पष्ट हो जाएगा। न्यूनतम आवश्यकताओं में रहकर जो परोपकार करता है और समाज से एकरूप होता है, वही सच्चा कलाकार होता है। इस जीवन कला को आत्मसात करनेवाले में मानवता का विकास होता है। इस कला का अर्जन न करनेवाला व्यक्ति इन्सानियत से जिंदगी बिताने में असफल होता है और सहायता के बिना उसकी गृहस्थी भी ध्वस्त हो जाती है। जो कला इन्सानियत से विश्व को शोभायमान बनाती है, वही मुख्य है। अतः सभी की सहायता से संसार को स्वर्गमय बनाना चाहिए।

सभी अपने अपने कार्य संपन्न करके सभी के सुख के बारे में सोचेंगां, तो सभी के सुख में अपना सुख दिखाई देगा। सामने दिखते ही आनंद हो, ऐसी समरसता जीव को प्रसप्त होना ही सभी कलाओं में श्रेष्ठ कला है। मन उससे हटने को तैयार ही न हो और जो दिखता है वह सब सुंदर प्रतीत हो, यह आत्मबल से ज्ञात होने के लिए ज्ञान कला आवश्यक है। आत्मबल की यह कला साधकर जो संसार सेक समरस हो गया, अंततः वही पूर्णत्व की कसौटी पर उतर जाता है। पूर्णत्व में दुख दोशादि कोई विकार नहीं होतें है। ऐसी ला स्वीकारनेवाला बिरला ही हो जाता है। श्रेष्ठ कलाकार उसी को माना जाता है, जो दुख दोशादि दूर करके अन्य लोगों की ओर ध्यान देता है।

जिसे विश्व का खयाल है, उसी पर संसार की पूरी जिम्मेदारी है। अपनी कला के माध्यम से उसे समाज का दुख दूर करना चाहिए। अतः सुनो और ऐसा कार्य करो की जिससे मानव सुखी होंगे। सभी

को सहयोग दे और दिखाई देनेवाली कमियों को सानंदपूर्वक दूर करे। सघ्भी को चाहिए की हर एक का सहयोग करे, यही सही उपाय है। इस कला से निश्चय ही गाँव को स्वर्गीय सुंदरता प्राप्त होगी। यह मानवता की जीवन कला गाँव में सभी को सीखाने से किसी को भी, कभी भी किसी चीज, की कमी महसूस नहीं होगी। योगी की जीवनकला जिस प्रकार सत्राविका (सतरा तत्त्व से बने मनुष्य शरीर में बनेवाला ईष्वरी अमृतरस, जो साशना की विशिश्ट अवस्था में अनुभव में आता है।018). अमृतसर प्रदान करती है, उसी प्रकार सहयोग की कला गाँव की मनुष्य जाति को अमर सुख प्रापत करा देगी। सोचने पर पता चलता है की सहयोग पर ही संपूर्ण विश्व चलता है। उसी से गाँव भी स्वस्थ, ज्ञानसंपनन और भाग्यशाली बनेगा।

हजार साधनों से अधिक मूल्यवान निर्मल सहयोग वृत्ति ही है। उसी की अमरवेल बहुप्रयत्नों से गाँव में लहलहाने दे। इसी के माध्यम से मनुष्य में दैवी शक्ति प्रकट होगी और निसर्ग प्रवृत्ति सभी जीवों की सेवा करने लगेगी। जीव ईश्वर का अंश है, फिर उसका गाँव ही क्यों राक्षस रहेंगा? प्रयत्न करने पर सर्वत्र सुख एवं आनंद दिखाई देगा। भाग्यवाद का आडंबर दूर करके मानव कला की शिक्षा ग्रहन कर आत्म विकास करे। अनुभव से ही कह रहा हूँ की इसी से सभी इच्छित फल प्राप्त होंगे, परंतु उसके पहले आत्मोन्नति कर ले (वहींराष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज महाराज कहते हैं)।

जीवात्माओं की शक्ति और साधनाओं का रहस्य

'अनुभव से कहता हूँ' यह मेंरा वाक्य सुनकर श्रोताओं ने प्रश्न किए की आत्मानुभव का मार्ग कौनसा है? कौन से ये यत्न आपने उसके लिए किए? कैसे बीताया जीवन? सच्ची आत्मानुभूति के लक्षण क्या हैं?

राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज कहते हैं - हे मित्रों, ध्यान से सुनिए - प्रत्येक जीव ईश्वर का ही अंश है ओर अपने कत्र्तृत्व से वह इच्छित पद प्राप्त कर सकता है। विवेक बुद्धि से कार्य करने पर मनुष्य को देवत्व पद प्राप्त होगा और इसके लिए प्रारब्ध और परिस्थिति भी उसका मार्ग प्रशस्त करेगी। उन्नति साधने को इच्छुक साधकों के लिए प्रकृति ही मार्गदर्शक ग्रंथ बनेगी और उसकी प्रत्येक प्रवृत्ति भी लक्ष्य प्राप्ति के साधन के रूप में उपयोग में आएगी। पहला सुसंस्कार और दूसरा आगे बढ़ने का दृढ निश्चय, ये दोनों साध्य होने पर संत-ग्रंथ ही नहीं, तो पूरा विश्व उसकी सहायता करेगा।[100]

डूबती दुनिया देखकर वह जागृत होता है, ऐसा वह भावी साधक बनता है। जिसके मन में आत्मोन्नति की लगन और मार्ग पर चलने की हिम्मत होती है, उसे अनायास ही दिशा मिल जाती है। मन के सत्य मार्ग से चलने का संकल्प ही हमें जीवन के पूर्णत्व का मार्ग दिखाता है तथा निर्भयता से उस पर चलने से लक्ष्य तक पहूँचाता है। इस प्रकार स्वयंप्रकाशित पत्थर ही हीरा कहलाता है और लोग उसे प्रयत्न करके खदान से बाहर निकालते हैं। मृग की नाभि से निकली हुई कस्तुरी राजा के मस्तक पर स्थान पाती है। कीचड में जन्म लेनेवाला कमलन पुश्प अपने गुणों से भगवान पर चढ जाता है। इस अनुभव से श्रोता यह बात ध्यान में रखे की प्रयत्नों से ही देवत्व प्राप्त होता है। यह संतो तथा गंथों का सत्य कथन है। आपने पूछा इसीलिए अपने जीवन के विषय में संक्षेप में बताता हूँ, हमारे साथ सभी मानव

[100] भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ.79

ईश्वर स्वरूप हैं। यही अनुभव की निषानी है। अंततः साधक यही अनुभव करता है।[101] देवत्व की ज्योत प्रकाशमान हैं उस पर पडा अज्ञान का आवरन हटाकर उसे स्वच्छ करने के प्रयत्नों को 'साधना' कहते हैं। ये सभी साधनाएं केवल निमित्त मात्र हैं। आत्मस्वरूप सर्वत्र एक जैसा ही है। विकार रहित पवित्र प्रवृत्ति ही उसका अनुभव करती है, यह आत्मोन्नति का वास्तविक सूत्र है। आत्मोन्नति का यह मार्ग स्वीकारनेवाला तथा विवेकबुद्धि से अंतःकरन में जागृत होनेवाला व्यक्ति खुद का उद्धार करके, जनता का भी उद्धार करता है। प्रयत्नों का यह शुद्ध महत्त्व सुनने तथा मेरे द्वारा की गई साधना का परिचय देने हेतु अपने जीवन के बारे में संक्षेप में बताता हूँ (वहींमहाराज कहते हैं)।

स्वरूपानुभव का साधना क्रम

क्या वजह थी यह सब अनुभव करने की? कौन सी साधना की इसके लिए? और भेदाभेद भावना कैसे नष्ट हो गई? इसका स्मरण होते ही समझ में आया की अगर हम साक्षीत्वरूप से देखे, तो इसकी कल्पना कर सकते हैं और दृष्टि अंतर्मुख करने से भी कर्म-वर्म का रहस्य मालूम हो सकता है। बुद्धि को स्वतंत्रता देकर जो कुछ दिखने लगा उसी पर विचार किया और उसके अनुसार कार्यसंबंध जोड़े। तब देह के मैं की जगह आत्मभाव आया। सभी लोग अपने जैसे ही हैं, इसका ज्ञान होकर भेदभावनष्टहोते ही, संतोष हुआ और ज्ञानमार्ग भी अपने आप समझने लगा।

यह नहीं कहा जा सकता की कीस गुरु के रूप में वंदन किया। किसी की मध्यस्थता के बगैर स्वयं जीवन ने ही यह मार्ग ढूंढ लिया। बाह्य तौर पर कोई दीक्षा नहीं दी गई अथवा कान नहीं फूंकें गए, बल्कि श्रद्धा से ही जीव को मार्गदर्शन किया। अहंकार न हो, इसलिए मैनें सद्गुरु की भावपूजा की। परंतु

---

[101] विश्व बालकुष्ण पर्वत,(2 आक्टोबर 2007), पृष्ठ57

इनके भी सहस्य अंतःकरन को ज्ञात हो गए की गुरु-शिष्य कल्पना भ्रामक है और दोनों में एक ही अगम्य वस्तु भरी हुई है।[102] यह जानने के लिए ही सत्संग की आवश्यकता है। जिससे मनुष्य का आत्मभाव जागृत होता है। ऐसा होते ही सभी का मूल आत्मतत्त्व, ज्ञात होने लगता है। फिर जान पडा की जो कुछ इससे पूर्व घटित याद आया, वह स्वाभाविक रूप से ही हुआ था। आत्मस्वरूप का अनुभव करने से स्वभाव में सहजवस्था आ गई और जो-जो घटित हुआ अथवा हो रहा है, वह भी सहजता से ही हो रहा है। स्वरूप यानी आत्मा का स्थायी भाव तथा सतत रहनेवाली निरंतर ऐसी अवस्था है। जिसमें कोई कार्य अथवा परिवर्तन नहीं होता हैं।

अखंड-शाश्वत प्रेम, परिपूर्ण ज्ञान, नित्य सत्य तथा पूर्ण आनंद ही उस स्वरूप के लक्षण हैं, जो नितनूतन, अभिन्न, अक्षय और चिरंतन है। साधन के आरंभ में इसका अनुभव न होने के कारण उसे अनेक जगहों पर खोजता रहा। उसका आश्चर्य तब तक रहा जब तक उसका अनुभव नहीं किया था। परंतु उसके स्वरूप का ज्ञान जितना अधिक बढ़ा, उतनी ही शक्ति विस्तृत हुई। और आगे चलकर पर्वतों की कतारें भी उपलों के समान प्रतीत होने लगी। राजा भी घर क नौकर जैसा लगने लगा और उसे भी सूचनाएं देने के लिए मन अधीर हो गया। इस प्रकार से यह संपूर्ण विश्व फिर मित्रों की तरह प्रतीत होने लगा तथा आत्मानंद पूर्णतः व्यापक हुआ। इससे हुआ यह की नींद में किसी के बडबडाने पर उस पर दया आती है, वैसे ही पीड़ीतों को सुखी करने की इच्छा होने लगी। पराएपन की दृष्टि पूर्णतःनष्ट होकर, वासना भी आत्मभाव में विलीन हो गई। परिना मतः औरों के सुख-दुख भी अपने लगने लगे। फिर देव-मंदिर, पूजा-उपासना पीछे छूट गई और उसकी जगह जीते-जागते मनुष्य दिखाई देने लगे। तत्पश्चात यह समझ में आया की सभी का कल्याण करनेवाली ईश्वर कृपा भी इसी से प्राप्त होगी। जहाँ कही कोई कमी दिखाई दी, मन वहीं दौडकर जाता और वह अपना ही अंग समझकर उसकी पूर्ति के लिए प्रयत्नशील हो जाता।

---

[102] अशोक बाचुलकर, (9 जुन 2015),गुरूकुंज, पृष्ठ87,88

आत्मानुभव संतों का सच्चा हृदगत

आत्मानुभव सुन श्रोता आत्मबोध में दंग हो गए। साधु-संतों ने भी संपूर्ण जनता को यही ज्ञान दिया और पुनः यही ज्ञान-चर्चा जारी रखने के लिए कहा है। आत्मबोध की महती धन्य है उसे सुनते वक्त कितना ब्रह्मानंद मिलता है, फिर आप गाँव की सेवा करने के लिए क्यों कह रहे हैं? श्रोताओं की यह धारना बन गई है। अतः शांति से चित्त एकाग्र कर इसका उत्तर सुनो। मेरे मन की सच्ची बात अब कहता हूँ। ग्रामगीता का संपूर्ण सार भी उसमें है। यह विचार सिर्फ मेंरा नहीं है, बल्कि सभी संत और ग्रंथों का सार इसमें है। महान् हस्तियाँ लिसके लिए बड़ी बेचैन रही, वही यह रहस्य है। हम लोग उनके ग्रंथ पढते हैं, सदैव आत्मज्ञान की चर्चा सुनते हैं, मात्र उनकी आंतरिक भावना की ओर दुर्लक्ष करते हैं। जिन्होने इस संसार में स्वानुभव लेकर उस मूल तत्त्व का अनुभव किया, उन सबका उद्देश्य था, संसार के सभी लोग सुखी हो। उनकी इच्छा थी की संपूर्ण संसार सुखी हो। सभी की वाणी से मंगलदायी विचार निकले, दुश्ट-दुर्जनों की वृत्ति पूर्णतः अच्छी हो तथा वे सभी सुजान बने।

उन्हे लगता था की सभी लोगों में बंधुभाव स्थापित हो, किसी को कहीं भी कोई कमी न महसूस हो, जो कोई भी मंगल कामना करेगा, उसकी वह कामना पूर्ण हो, किसी में भी कहीं भी शत्रु-भाव, द्वेश- भाव ना रहे, कहीं किसी प्रकार का कलह ना बचे, साथ ही पाखंड, दुष्मनी अत्याचार दवं स्वैराचार समाप्त हो जाए। संसार से भेदभावनष्टहो, परस्पर विचार, धर्म-संप्रदाय के मत स्वतंत्र होने के बावजूद वे परस्पर पूरक हो और सर्वत्र आन्नद ही आनंद रहे। संसार के सभी श्रेष्ठ महापुरुशों के मन में रात-दिन यही छटपटाहट होती थी। हम लोग सुखी बने, 'जैसे हम, वैसे सभी' यह अहसास हर एक को है। इसीलिए उन्होंने इसे आत्मज्ञान कहा है। चित्त शुद्धि के लिए तथा सभी जीव ईश्वर की संतान हैं - ऐसा सभी समझे, इसलिए उन्होंने ईश्वर-भजन किया। संसार उपभोग के लिए नहीं, तो निश्काम सेवा के लिए है और उसके द्वारा अपना भाग्योदय करने के लिए है। उन्होंने त्याग, वैराग्य का प्रतिपादन

किया। भूत दया, परोपकार, दान धर्म, यज्ञ आदि द्वारा दुखी लोगों की जरूरतें पूरी कर, उनका पूर्ण विकास करें।[103] समाज में समानता लाने हेतु साधु-संतो नें दृष्टि से इन साधनों का अवलंब किया। तीर्थधामों द्वारा भी उन्होंने मनुष्य को सामुदायिकता की सीख दी। एक-दूसरे को काला बांटना-ऐसी कीतनी ही परंपराएं उनहोने विकसित की हैं। इन सभी साधनों के पीछे उनका उद्देश्य था - मानव की संकीर्ण भावना समाप्त हो और सामुदायिक कार्य द्वारा पूरा संसार सुखी बन जाए। भगवद्गीता का वचन है - सभी मिलकर एकता से रहे, सभी सबके लिए पूरक हो तथा सभी जीवों के हितार्थ प्रयत्नशील रहे। अखिल मानव जाजि सुख से रहे - यही सभी धर्मों का आत्मीय उद्देश्य और वेदों का घोश है।

समाज की चष्मपोषी और उसके परिणाम

परंतु यह तत्व आचरन में न लाने के कारण मनुष्य विकासहीन हो गया और संतों के उच्च ज्ञान की लोगों ने अवहेलना की। लोग उनके वचनों पर आपस में चर्चा, वितंडावाद करते हैं। मात्र उनका ज्ञान जीवन में अपनाने को महत्त्व नहीं देते हैं। संतो नें ब्रह्मज्ञान का उपदेश इसलिए किया की सभी लोगों के हृदय विशाल बने, सभी समानता एवं परस्पर सहयोग के साथ रहें। दुर्भाग्य यह की ब्रह्मज्ञान केवल दोहराया गया और लोग स्वार्थ के लिए अपनी-अपनी शेखी बघारने लगे। पडोसी दुख से मर भी जाए, तो किसी को उसकी चिंता नहीं है।

दधीची ऋषि ने अपनी हड्डियाँ दे दी। जनसेवा के लिए ऋषि-मुनियों ने दिन-रात कष्ट उठाए। दामाजी ने धान्य लूटाकर लोगों को सुखी बनाया, तब ईश्वर उन पर रिझ गया। संत दादु ने सेवांभाव से धुढने का काम किया, संत नामदेव हाथ में घी की कटोरी लेकर कुत्ते के पीछे दौड पड़े और कपड़े सीकर उन्होंने ईश्वर को संतुष्ट किया।[104]

---

[103] 5) पुनसे नोरा, (5 नोव्हेंबर 2001), भारत साधू समाज, पृष्ठ59,60

[104] 6) अमोल कडवे, (15 डिसेंबर 2000), पृष्ठ88,89

समाज जीवन और सामुदायिक व्यवस्था

जो एक के लिए है, वही सभी के लिए लागू करना सत्यधर्म का रहस्य है। सभी के सुख-दुख में सभी की भावनाए। एकरूप होनी चाहिए। जीवन जीने का सभी को समान अधिकार हैं। श्रेष्ठ-कनिष्ठता गुणों को लेकर हो सकती है, जाति और पैसों को लेकर नहीं। सभी अपनी-अपनी कुव्वत और योग्यतानुसार यथासंभव काम करे और ऐसी व्यवस्था निर्माण करे की हर एक की जयरत पूरी हो तथा सभी को सुख मिले। संपूर्ण गाँव के लिए ऐसी ही व्यवस्था हो।[105] सब मिलकर सभी के सालभर की रोजी-रोटी, कपडें और काम-धंदे की व्यवस्था करे। ताकी सालभर किसी की चिंता नहीं रहेगी। सालाना एक व्यक्ति को कितना अन्न, कपडें आदि की जरूरत होती है, इसका आय-व्ययक तैयार करे। सभी के लिए घर-बार, आभूशणों की व्यवस्था उसमें हो। किसी को भी अलग से मुनाफा, संपत्ति, वैभव, महत्त्व एवं लाड-प्यार ना दे। सभी को कपडें, आभूषण, मान-सन्मान, साज-श्रृंगार और भोजन समान रूप में मिले तथा कामों का अधिकार भी समान रहे। सभी के तीज-त्यौहार एवं मिष्ठान एक ही प्रकार के हो। किसी की खाने पीने की चीजें अलग न हों।

त्यौहार के दिन गाँव में किसी की मृत्यु होने पर, कोई भी मिष्ठान बनाकर न खाए। त्योहार अगले दिन मनाया जाए। सभी सुबी एक ही समय में जग जाए एवं उत्साह से घर काम करे। साफ-सफाई, ध्यान प्रार्थना जैसे उपक्रम सामुदायिक रूप में करें। सभी का रहन-सहन एवं खान-पान समान हो। योग्यतानुसार सभी के बच्चों को शिक्षा मिले। पूरे गाँव के लिए एक ही पाठशाला हो। सभी बच्चों का रहन-सहन एक जैसा रखते हुए सभी से प्रेमपूर्वक व्यवहार करे। स्वास्थ ठीक रहने के लिए सभी को दवा-पानी की सुविधा समान रूप में उपलब्ध हो । एक की जिम्मेदारी, संपूर्ण गाँव की जिम्मेदारी समझे। स्त्री-पुरुष का भेदभाव न कर सभी की समान उन्नति हो। गाँव में आए अतिथि उस आदर्श गाँव

---

[105] रूपराव वाघ, (1999), पृष्ठ70,71

के अतिथि समझे। 'हमें उनसे क्या लेना-देना है', ऐसा पराएपन का भाव कोई भी न रखे। मात्र अतिथ्य ही एक काम न बन जाए। इसलिए उनका आने का समय और संख्या के संदर्भ में पाबंदी एवं नियम हो। अनावश्यक काम ना हो, तो पत्राचार से काम चला ले। इस प्रकार अतिथ्य करने, खाने-खिलाने में समय व्यर्थ न गँवाए। गाँव के शादी -ब्याह में संपूर्ण गाँव परिश्रम करे, मात्र इस बात का खयाल रखे की निर्धारित बातों के लिए सदैव दौडधूप ना करनी पड़े।[106]तिथि, मुहरत के लिए न रूककर गाँव के दस-पचास-सौ, सभी लडकें-लडकियों का विवाह उक ही समय में एक ही स्थान पर सामुदायिक पद्धति से कराए। सभी के लिए गाँव में एक विवाह स्थल हो। वहां गाँव के सभी लोग बर्तन, बिछाईत आदि की पूरी व्यवस्था करे। शादी करनेवाले लडकों को भी चाहिए की सभी का मन प्रसन्न रहे, ऐसी एक ही पवित्र, विशाल एवं सुंदर जगह पसंद करे। प्रसन्न समय और संत-सज्जन देखकर विवाह केलिए वही मुहरत निश्चित करके कार्य संपन्न करे। गाँव के सभी लोग एक-दूसरे को मित्र समझकर सहयोग करे और वधु-वर को ऐत्र बिठाकर विवाह विधि संपन्न कराए।

विवाहादि प्रसंगों में गाँव की संपत्ति किसी को भी अनावश्यक खच्र करने न दे। इसकी अपरक्षा ग्रामोद्धार की योजनाएं बनाए। सभी अपना सर्वस्व गाँव को अर्पित करे और गाँव के आदर्श नागरिक बनने से वंचित न रहे। सभी गृहस्थ होने पर भी संतती पर पाबंदी होनी चाहिए। तीन से अधिक बच्चों को जन्म न दे (आज की स्थितिनुसार एक अथवा दो बहुत हो गए)। बालक का बचपन खत्म होकर, वह माँ के दूध विना रहने लगता है, तब उसे माँ से दूर रखे। गाँव में शिषुपालन गृह हो। मेंहनत का काम जिनसे नहीं होता है, ऐसी बूढी ओरतों पर उसकी जिम्मेदारी सौंपी जाए। संपत्ति एवं संतती दोनों गाँव की संपत्ति समझकर, दोनों को विकसित कर, गाँव को समृद्ध बनाए।

---

[106] हरीभाऊ वेलुरकर,(2014),साधु सिंध की लहरे, श्री गुरूदेव सेवा,57

आदर्श गाँव रक्षार्थ दक्षता

गाँव का ऐसा प्रभाव बनाए की कोई नेता गाँव को सूचित किए बगैर अथवा गाँव का विचार सुने बगैर गाँव में कदम सखने की हिम्मत न करे। गाँव की ऐसी धाक हो की मुखिया की अनुमति लिए बगैर कोई अजनबी व्यक्ति सीधे कार्यक्रम में घुसने न पाए। गाँव का बौद्धिक सतर ऊँचा उठे और लोग विविध दर्षनों को समझ सके, इसलिए नियमित रूप से ग्रामोन्नति के भाषण तथा व्याख्यानों का आयोजन किया जाए। खुद को औरों से अलग समझने की गजती, स्वप्न में भी ना करे। इसलिए गाँव में सदैव ज्ञानोपदेश के कार्यक्रम होते रहें।

गाँव में सभी धर्मों का आदर करनेवाला एक प्रार्थना मंदिर हो। दुनिया की सभी महान् विभूतियों को हम देवता समान पूजनीय समझे। उस मंदिर में श्रेष्ठ महात्माओं की जयंती, तीज एवं त्यौहार चाहे जितने मनाए। इस प्रकार मन पर ज्ञान संस्कार होतें रहेंगे, तो हममें सामुदायिकता की भावना बनी रहेगी। गाँव में होनेवाला उत्सव सभी का समझकर, सब एकत्र आकर मिलकर सामूहिक रूप में मनाए। ऐसा करने से जातीयता, सांप्रदायिकता और व्यक्तिनिष्ठा बढेगी। परिना मतः गाँव में विविध संप्रदाय-दल निर्माण होंगे ओर गाँव के टुकड़े होने में देर नहीं लगेगी।

इसलिए अलगावाद को अवसर न दे। संपूर्ण गाँव एक निर्मल परिवार है, ऐसा उत्साह सभी के मन में हो। एक-दूसरे पर हमारा प्रेम ही, हमारी वास्तविक संपत्ति है। हमारा श्रम ही, हमारा वास्तविक धन है। हमारा सहयोग ही, हमारी प्रतिष्ठा है - ऐसे विचार सभी के हो। गाँव की ख्याति बढ़ानेवाले, सभी को स्फूर्ति देनेवाले तथा हर परिवार में सुख-शांति स्थापित करनेवाले कार्यक्रम ही गाँव में आयोजित करे।

लोकतंत्र का अर्थ और उसके लिए आवश्यक दक्षता

किसी भी प्रकार का शासन न होते हुए भी सत्ययुग की जनता न्यायपूर्वक रह रही थी। उसी का रूपांतर यानी वर्तमान लोकतंत्र तथा पंचायत व्यवस्था है। इसकी सबसे बड़ी आत्मघाती कमजोरी यह है की पंच के रूप में अयोग्य व्यक्ति चुने जाने पर ग्राम जीवन के लिए खतरा निर्माण होना। सेवाहीन लोगों के हाथो में पंचायत का कारोबार सौंपने पर सुख-संतोष के बजाय आपत्ति एवं चिंता ही नसीब होगी। लोगों की हार्दिक इच्छा को सत्ता के सिंहासन पर बिठाना ही लोकतंत्र है। लोगों के परस्पर सहयोग से लोगों का हित करना ही लोकतंत्र है। संपूर्ण जनता देश का स्वामी मानकर उसके अनुसार सभी लोग आचरन करे। जहाँ कोई काम से जी नहीं चुराता है और सभी लोग सेवा तत्पर, उत्साही एवं न्यायी होते हैं, वही सही मायनों में लोकतंत्र में सत्ताधिश पदाधिकारी मालिक नहीं, बल्कि दायित्व की दृष्टि से वे जनता का प्रकाशक हैं। सभी लोग काम के लिए सदैव तत्पर रहे। इसमें जो अग्रेसर रहेगा, वस्तुतः वही गाँव का मुख्य अधिारी, पंच अथवा नेता है। जो काम में तत्पर एवं नीतिवान होगा, षौचालय सफाई का काम भी बड़े सहज भाव से करेगा वही पंच होने के योग्य है। सहज ढंग से काम करते हुए नियम-निष्ठा का पालन करनेवाला व्यक्ति ही अपने गुणों के बल पर गाँव का अधिकारी बने। यहां सदगुन, साहस एवं स्वार्थ त्याग का ही अधिक महत्त्व है। जो व्यक्ति ग्रामवासियों को भगवान समझेंगे, वे ही गाँव के नेता बन सकेंगे। ग्रामवासियों को ऐसे व्यक्ति का गौरव करना चाहिए, जो गाँव को भगवान मानकर उसकी सेवा का मंत्र अपनी कृति में उतारता है। जो गाँव को ही भगवान मानता है, उसी सच्चे सात्त्विक पुरुष को पंच के रूप में चुना जाए। एसे व्यक्ति का गाँव सेवा के अलावा कोई धर्म नहीं होता है है और अन्य कोई काम नहीं होता है। सदैव के लिए सेवा ही उनका उपक्रम होता है।[107] उसकी संपूर्ण शक्ति, भक्ति और स्वर्वस्व हम ग्रामवासियों के लिए ही होता है। अतः वह हमारे लिए पिता समान होता है। जाति, धर्म, संप्रदाय के भिन्नत्त्व को, जो महत्त्व नहीं देता है, देसे ही व्यक्ति को

[107] ग्रामजागृती भजनावली, श्री गुरूदेव प्रकाशन मंडळ, चंदपूर,59

पंच के रूप में चुनिए। श्रद्धा-विचारों से वह पहचाना जा सकता है। इस प्रकार गाँव में कहीं भी गुटबंदी की धींगा-मुष्ती न होने दे। हम स्वार्थ भूलकर वही करे, जिसमें सभी का हित हो। जो व्यक्ति लोगों का अधिक कल्याण करेगा, उसे ही गाँव का नेता समझिए।

पंचो के दायित्त्व और रामराज्य का विस्तार

अपना संपूर्ण समय गाँव के कामों में व्यतीत करनेवाले अरौर पूरे गाँव को अपना समझनेवाले सज्जन लोगों की पंच कमेंटी बनाई जाए। पंचो कों चाहिए की वे सभी को साथ देकर चले। गाँव के कल्याण में कहीं कोई कमी दिखाई देने पर, वह उसे अपना दोश समझकर सुधार करे। अपने अथवा परिवार के हित के लिए गाँव के कारोबार में अव्यवस्था न आने दे। ऐसा ही दृष्टिकोण वह लोगों का भी बनाए। किसी पर भी अन्याय न हो और न ही किसी को दुःख भुगतना ग्राम प्रमुख सदैव इस बात का खयाल रखे की चिंटी को भी परेषानी ना हो। सार्वजनिक वस्तु वह अपने परिवार के उपयोग में न लाए। अपने रिश्तेदार मित्रों को किसी प्रकार की छूट न देते हुए, वे अधिक तत्परता से जनसेवा ही करे। प्रमुख को अपना आग्रह त्यागाकर बहुमत देखना चाहिए। गाँव का प्रशासन एकमत से चलाने की अधिक से अधिक कोशिश वह करे। यह सच है पंच परमेंष्वर के न्याय से, पंच ही देवता है। फिर भी उनमें सत्ता मदद ना हो। एक बार कोई नियम निश्चित होने पर, उसका पालन करनें में ख़ुशी होनी चाहिए। सभी सबके लिए मेंहनत करें एवं सबके हित में ही अपना हित समझे। यह आदर्श बड़े लोग पहले खुद अपनाए और बाद में ग्रामवासियों के समक्ष रख दे।[108]

[108] सुदाम सावरकर, संक्षिप्त जीवनदर्शन(ग्रामगीता). 97

इसी में गाँव और ग्रामवासियों का बडप्पन है। यह आदर्श ग्रामराज्य की निषानी है और इसी से ग्रामजीवन सुखी होगा। विश्वपूजनीय महात्मा गांधी ने कहा है, 'ग्रामराज्य ही रामराज्य है' यही विचार प्रस्तुत अध्याय में विशद किया है। अपने गाँव को ही अपना राज्य समझकर, जो वैसा आदर्श जीवन जीएंगे उन सभी से रिष्ता जुड़ेगा। दूसरे गाँव को अपना शत्रु मत समझो। अपना संबंध अपने काम से है। दूसरे गाँव के साथ अच्छे संबंध बनाए रखने के लिए भी पंच निश्चय ही सहयोग देंगे। जहाँ की पंच कमेंटी निष्ठावान रहेगी, वह गाँव धरती का भू-वैकुंठ (स्वर्ग) बन जाएगा। उस गाँव के प्रभाव से धरती अपने आप पवित्र हो जाएगी। इस प्रकार जो गाँव उन्नत होगा, वह अपने सूबे में प्रमुख होगा। प्रत्येक सूबा इस प्रकार प्रभावी बनने से देश के लिए भूशना वह होगा। जो देश इस ढंग से उन्नत होगा, वह संसार का शांतिपूर्ण घटक साबित होगा। मात्र अपना ही हित चाहनेवाला देश विश्वशांति के लिए घातक सिद्ध होगा। (वहींमहाराज विशेष उपदेश कर रहे हैं) ध्यान से सुनिए - 'धरती पर स्वर्ग अविरत हो, ऐसा अगर लगता है, तो सामुदायिक कार्य के प्रति सहपरिवार समर्पित हो जाओ।' ये विचार ध्यान से पढो, दिल से उनका मनन करो और फिर अपना सर्वस्व अर्पित करके, इस योजना में सहभागी हो जाओ। श्रोताओं! मेंरी बात, सुनी आपने। अब अधिक समय मत गॅवाकर आज ही इस कार्य के लिए तन-मन-धन अर्पित करो। इसी से गृहस्थी को स्वर्ग समान बनाने की महान् विचारों की इच्छा सफल होगी। आपकी ज्ञान-भक्ति एवं सबकुछ सार्थक होगा और गृहस्थी-परमार्थ की भी चिंताएं इसी से मिट जाएंगी (ऐसा यकीन तुकडोजी महाराज देते हैं) ।

संत और ग्रामगीता का सामंजस्य तथा ग्रंथादि साधनों के उद्देश्य

श्रोताओं ने आनंदपूर्वक प्रश्न पूछा - आपने बताया की जीवनदर्शनकैसा होता है। मात्र अन्य ग्रंथो में कथाएं, कहानियाँ एवं आत्मज्ञान कहा गया है। लोग गाँव-गाँव में जो ग्रंथ सखते हैं, उससे आपकी पोथी अलग ही दिखती है। अतः अपने उद्धार के लिए हम कीस ग्रंथ का चयन करे? गाँव को भू-वैकुंठ बनाने के लिए अन्य ग्रंथों का क्या कोई उपयोग नहीं होगा? गाँव पर सुसंस्कार हो, ऐसा कोई उपाय नहीं है क्या?

(वहींराष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज कहते हैं) मित्रों सुनो उत्तर - ग्रामगीता अन्य ग्रंथों से अलग नहीं है, और न ही अन्य ग्रंथों को इसका कोई विरोध है। सभी उपनिशद रूपी गायों का दोहन करने पर जैसे भगवद्गीता निर्माण हो गई, वेसे ही ग्रामगीता में भी सभी संत एवं ग्रंथ, सार रूप में समाए हुए हैं। सभी जीव भगवान के रूप होने के संतश्रेश्ठों के अनुभव तत्त्व की चर्चा, इस ग्रामगीता में भी की गई है। गीता द्वारा प्रतिपादित विश्व रूप दर्शन, वेद का विराठ-पुरुष वर्णन और संतो के विशत्मक ईश्वर की निषानी यहां सक्रिय कार्य द्वारा प्राप्त होती है। [109] अनेक ग्रंथो के वर्ण, अनेक तीर्थक्षेत्रों केदर्शनऔर कथा-कीर्तन के अनेक उदहारण भी इसीलिए हैं। लोग एक-दूसरे को सहयोग करना भूलकर स्वार्थ के कारण विकृत जीवन जीने लगे हैं। अपने स्वार्थ हेतु दूसरों की फजीहत करने लगे हैं। यह सब बंद हो, इस उद्देश्य से संत-महात्माओं ने अनुसंधान करके अनुभवों के बाद उपाय निकाला है। उनके कदमों पर कदम रखने और उनके मार्ग का अनुकरन करने पर भी दृष्टियों से जीवन सार्थक होगा। इसके लिए ग्रंथ-पोथियाँ पढकर, उनके द्वारा लोगों को जागृत करे। और फिर इस प्रकार के सहयोग से गाँव-गाँव में सुसंस्कार भर दे। लोगों को इन्सानियत की सीख मिलने के लिए ही गाँव-गाँव में कथा-कीर्तन के कार्यक्रम एवं पोथी-पुराणों का पठन किया जाता है। मानव की उन्नति हो, इसलिए हमने भी विविध दृश्टांत तथा कहानियाँ कहकर ग्रामगीता का गीत गाया। गाँव में सभी प्रकार के सुखों की कोंपल फूटे, यही मानव का कत्र्तव्य है। अतः बिना आडंबर के अपना जीवन सुंदर बनाए, मनुष्य स्वस्थ एवं सात्त्विक बने, उसे नुकसानदायी व्यसन ना हो, उसका आचरन किसी के लिए कष्टदायी ना हो - यह सीखने के लिए ही साधु - संतों ने पोथी, भजन-कीर्तन जैसे साधनों की व्यवस्था की है।

---

[109] गुरूकुंज आश्रम, श्रीगुरूदेव 'मासिक', पृष्ठ53,54

राष्ट्रीय नीतिनुसार समाज-रचना निर्माण करने के लिए इन्सानियत को ध्यान में रखते हुए, जनता को सन्मार्ग पर ले जाना ही सभी साधनों की मुख्य दृष्टि है। उसके लिए समाज को मूल तत्त्व तथा दिखावटी बाह्याडंबर समझा दे, और आवश्यक ग्रंथ आदि साधन गाँव में लाए। ग्रंथ ओवीबद्ध ही हो, ऐसा आग्रह ना करे तथा लोग सहज ही समझ सके ऐसी कोई भी गद्य रचना हो। ऐतिहासिक, जीवनीपरक, बोध देनेवाले, अभंग, पुरान आदि अनेक ग्रंथों के पठन करे।

संतों के विवेक ग्रंथ एवं उनके पठन की दृष्टि

पूर्व के इन ग्रंथो के कारण बनी धारना एं संतों ने जान ली। इसिलिए उन्होंने सही दृष्टि देनेवाले ज्ञानप्रद ग्रंथ निर्माण किए। परिना मतः सामान्य लोगों के संशय दूर हो गए। श्रद्धालुओं का आचरन सुधारने तथा उन्हें सर्वांगीन ज्ञान हो, इस उद्देश्य संत-महंतों ने हम पर उपकार किए और हमें उपकृत किया। सामान्य लोग उद्धार का सरल उपाय समझे, इसिलिए संस्कृत ग्रंथो का सार सुबोध तरीके से मराठी में लाकर संतों ने ग्रंथो का भांडार निर्माण किया है । पुरान काल के ऋषियों की एक संस्कृत भाषा से अनेक भाषाओं का जन्म हुआ। संत कवियों ने उनमें से मराठी भाषा का विस्तार किया। संत ज्ञानेश्वर, मुकुंदराज, चक्रधर, एकनाथादि हंसराज ने संस्कृत ग्रंथों का ज्ञान मराठी में लाकर, उसे सरल बना दिया। समर्थ रामदास, मुक्तेश्वर, मोरोपंत, जैसे महाराष्ट्र के ग्रंथकर्ताओं ने गीत, अभंग, गाथाएं लिखकर मराठी ग्रंथो का विकास किया। महाराष्ट्र में जैसे-जैसे संत-कवियों की परंपरा निर्माण होती गई, वैसे-वैसे उनके जीवन चरित्र के ग्रंथों की संख्या भी बढती गई। **110** [110]समाज को सही रास्ते पर लाने के लिए कइयों ने ग्रंथ लिखे। स्वामी विवेकानंदादि आधुनिक महान् संतों ने नए-पुराने विचारोंवाले लोगों का भ्रम दूर करने हेतु अनेक भाषाओं में ग्रंथ लिखे और ज्ञानबोध के दीप

[110] प्रा. रघुनाथ कडव, राष्ट्रसंताची जन्मभुमी-यावली(शहीद) पृष्ठ52

प्रज्ज्वलित किए। कर्मठता एवं दिखावटी विद्वता के शिकार न होकर, जिनसे सहज ही ज्ञान मिले, ऐसे ग्रंथो का चयन करे। अपनी योग्यता तथा सामाजिक स्तर ध्यान में रखकर ऐसे ही ग्रंथ पढीए, लिनसे आदर्श जीवन के लिए ज्ञान-प्राप्ति आसान होगी।

ग्रंथ प्रतीति एवं गुरु प्रतीति

अनुभव से निश्चयपूर्वक कहा जाता है की शास्त्र प्रतीति और गुरु प्रतीत होने के पश्चात ही आत्म प्रतीति होती है। इसके लिए सद्ग्रंथों का पठन करने के लिए संतों ने कहा है। साधक के अधिकारानुसार ग्रंथ पठन से जीवन सार्थक होता हैं। विविध अधिकारों के अनुसार ग्रंथों का भरपूर खजाना है। इस संदर्भ में विद्वानों में मत-मतांतर हैं। उनमें से अपने लिए उचित ऐसा कौनसा ग्रंथ चुने? ग्रंथो में ही कहा गया है की अपना अधिकार एवं योग्यता खुद को मालूम हो। और यह पूर्णतः खुद पर ही निर्भर है।

आत्मप्रतीति यानी दिव्य दृष्टि

आत्मप्रतीति से तात्पर्य है, दिव्य दृष्टि, जिसमें हैं - व्यक्ती, समश्टि और परमोश्टि, यानी व्यक्ति, समाज ओर संपूर्ण विश्व। ओर इन सबमें खुद ही एकत्त्व से अनंत रूप् को अनुभव करते हैं। मुल तत्त्वो को रूप में अनुभव करने से ईश्वर, संत, मानव, पापी, पुण्यवान-सभी चैतन्यरूप विश्व ही दिखने लगतें हैं। देसा दिव्य अनुभवी व्यक्ति ही सभी के साथ व्यापक ही सभी के साथ व्यापक व्यवहार करता है और विश्व के कल्याण का कारण भी बनाता है। परंतु जो लोग अब भी व्यवहार नहीं जानते हैं, वे गहरे अध्यात्मवाले ग्रंथ पढने की जल्दबाजी करेंगे, तो ग्रंथ पठन एकांगी एवं निरर्थक होगा। प्रथम आवश्यक शुद्धाचरन के ग्रंथ पढे बगैर वे वेदांत ग्रंथ पढे, तो ओलती का पानी मुंड़ेर पर ले जाने के

निरर्थक प्रयत्न करने जैसा होगा। मुख से 'सर्वब्रह्म' कहकर मनमाने कर्म करने से शब्द पांडित्य के कारण लोगों में नास्तिक से भी ज्यादा भ्रम पैदा होगा। गाँव में सभी लोग दुख से त्रस्त हो और ऐसी स्थिति में वह 'सच्चिदानंद संसार' की घोषना करेगा, तो लोगों को लगेगा की यह स्वांग रचनेवाला बहुरूपीया है।

अतः जिनसे ग्रामशुद्धि होकर सभी को प्रेम, ज्ञान, सत्य और आनंद मिलेगा, देसे सुविचारवाले ग्रंथ गाँव में रखे जाए। ज्ञान-विज्ञान की प्रगति होकर जीवन को उन्नत बनानेवाला ग्रंथ-भांडार गाँव-गाँव में हो। अपने कत्तव्य कौनसे हैं, सभी का कल्याण कीसमें हैं और यह संपूर्ण विश्व तन-मन-धन से कैसे समृद्ध होगा, इन बातों को भी समझे।

उपसंहार

मुझे विश्वास है की श्री तुकडोजी की ग्रामगीता आज के जमाने में 'गीता' या 'ज्ञानेश्वरी' के मुताबिक ही जनता को सही ज्ञान देकर गाँव-गाँव में, झोपड़ी-झोपड़ी में सुख-संतोष पैदा करेगी। ऐसे ग्रंथ की आज गाँव-गाँव में आवश्यकता है। इस ग्रंथ का महत्व इतना है की इससे सीधे-सीधे समाज को ज्ञान मिलेगा, अपने हाथों से खुद का दुख-दैन्य मिटाने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त होगा। भगवान की 'गीता' का सच्चा मर्म, 'सभी जीव देवता समान समझकर सेवा करे', यह इस ग्रंथ में आज की आवश्यकतानुसार व्यक्त हुआ है। इसी के द्वारा गृहस्थी और परमार्थ साध्य हो सकेगा। प्रार्थना है की बाबा का यह प्रसाद सभी को सुख-शांति दे।

तुकडोजी महाराज जनसेवा में निरंतर व्यस्त थे। उन्होंने स्वयं ग्रामरचना का उद्योग किया। गाँवों को भगवान समझकर वे कार्य करते थे। ग्राम जनता का उत्थान ही उनका एकमात्र लक्ष्य था। ग्राम रचना के किसी भी अंग को उन्होंने दुर्लक्षित नहीं किया। उनका ग्राम-कार्य स्वयंभू है। वे दिन-रात देश की फिक्र करते थे। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान ब्रिटिशसरकार ने उन्हें जेल में भी डाला। वहीं उनकी'ग्रामगीता' उन्हीं के कथानानुसार स्वानुभाव सम्मत है, जिससे वह आप ही आप शास्त्रसम्मत बन चुकी है। उनके विवेचन में पाठकों को कही भी संकीर्ण भावनाओं एवं अंधविष्वासों का आभास नहीं मिलेगा, बल्कि उनके आधुनिक मन के हीदर्शनहांगे। उनका कार्य महान् है तथा सेवा बेजोड है। इसमेंबिल्कुल भी संदेह नहीं की गाँव-गाँव के बाल गोपालों को इस 'ग्रामगीता' से अच्छी प्रेरणा मिलेगी।

'शासकीय व्यवस्था द्वारा जो कार्य नहीं हो सकता उससे अधिक उत्कृष्ट कार्य संत तुकडोजी कर रहे है। यही वजह है की संत राष्ट्रकार्य भी कर सकते है। इस बात पर मुझे यकीन हो रहा है। राष्ट्रोंन्नति की

दृष्टि से उन्होंने अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया है। विकास योजनाओं को सफल बनाने की शिक्षा पाने हेतु कार्यकर्ताओं को संत तुकडोजी के सहवास में रहना चाहिए।

'ग्राम लोकजीवन से समरस होकर अशिक्षितों को ऊपर उठाने के सफल प्रयत्न रात-दिन करनेवाले संत तुकडोजी महाराज महान् लोकशिक्षाक है। वस्तुतः उन्हें 'डॉक्टर आॅफ दि सोशल एज्यकेशन' उपाधि से विभशित किया जाना चाहिए!'

वंदनीय राष्ट्ररसंत जी अपने अंतिम समय में रूग्णषैया पर थे। तब हमने पूछा की 'वर्तमान समय में आपका संदेश क्या है? इस विज्ञान युग में खुद जीकर औरों को जिलाने का उपाय क्या है?' वंदनीय राष्ट्रसंत जी ने कहा - 'ग्रामगीता' द्वारा मैंने अपने हृद्गत विचारों को व्यक्त किया है। विश्व प्रेम ही समय रोगों का उपचार है! इसका आरंभ हर गाँव से, हर व्यक्ति से हो। राष्ट्ररसंत जी ने अपनी समूची शक्ति लगाकर सामुदायिक प्रार्थना एवं 'ग्रामगिता' का दान राष्ट्र को दिया है। 'ग्रामगिता' जैसा ग्रंथ पढने का हमारा अधिकार है।

'क्या है इस ग्रंथ में?' मुझे लगा, ऐसा सवाल करने के बजाय 'क्या नहीं है?' ऐसा सवाल करने पर उत्तर मिलेगा, 'ग्रंथ में सबकुछ है।' विशेष रूप से बहूजन समाज के उउत्कर्ष के लिए जो-जो बातें आवश्यक हैं, वे सभी विशिश्ट ढंग से गहरी भावनाओं के अधिष्ठान द्वार प्रासादिक वाणी में 'ग्रामगिता' में प्रतिपादित की गई हैं। वस्तुतः वर्तमान समय में वही कलाकृति श्रेष्ठ है, जो पहले नहीं था, उसे प्रभावी ढंग से कह सकती है तथा असंख्य लोगों पर प्रभाव डाल सकती है.....। प्रस्तुत ग्रन्थ पूर्व परंपरा से अलग है।..... इसमें ग्रामोद्धार की सर्वांगीन योजनाओं का प्रभावी दिग्दर्शन महाराज ने किया है।

प्रस्तुत ग्रंथ का प्रकाशन भारत में एक हजार स्थानों पर एक ही समय पर आज हो रहा है। इतनी बड़ी योजना ही इस ग्रंथ को परंपरा से अलग कर देती है। मात्र रामदास की परंपरा से जोडकर कृपया इस ग्रन्थ को समाधिस्थ मत कीजिए। अध्यात्म में जिसकी पहूँच विश्व तक है, उसी देश के समाज में

आज अनेक दुख है। ये दुख समाज को दिखते ही नहीं हैं..... न दिखनेवाले इन दुखो को व्यक्त करना, वह भी विशिश्ट ढंग से इसमें नवीनता है। इसी में क्रांति के बीज हैं। 'ग्रामगीता' मात्र परंपरागत ग्रंथ नहीं है, वह इस प्रकार क्रांतदर्षी है।....वर्तमान समय में अत्यंत दुर्लक्षित दुखी जीवन हैं, ग्राम में। देहात की कसक क्या है, उसका निराकरन कैसे होगा, यह है आज की प्रधान समस्या।.... इस एक दुर्लक्षित दुखक्रांत देहात पर महाराज ने अपना ध्यान केंद्रित किया और उस पर लिखा। महाराज योगी हैं, नहीं वे तो योगियों से भी परे हैं। महान् आध्यत्मिक हैं।.... आज अंतरात्मा के ईश्वर को जगाने का कार्य ग्राम को साक्षी मानकर करना है। महाराज ने ग्राम को सजीव वस्तु मानकर 'ग्रामगीता' लिखी है। उन सजीव कृशकाय ग्रामपुरुषों के दुख से महाराज का हृदय पसीज उठा। हृदय में उफन पड़ी भावनाएँ, 'ग्रामगिता' में आविश्कृत हो गई।.... दुर्लक्षित ग्रामजीवन में चैतन्य भरने के लिए लिखी गई यह 'ग्रामगीता' इसलिए मूल्यवान नहीं है की वह पुराने से बेजोड है, बल्कि एक उपरक्षित दुख को व्यक्त करने का उसका क्रांतिकारी नाविन्य महत्त्वपूर्ण है।.... ग्राम में नवचैतन्य आए इस आंतरिक इच्छा से अत्यंत प्रासादिक वाणी से महाराज ने यह गीता विस्तारषः लिखी है। इसे पढते समय अनुभव होता है की ग्राम चैतन्यमय हो गया। दुर्लक्षित अन्याय, दुख, कसक, यातनाएं गाँव-गाँव में भयावहता निर्माण कर रही हो, तब उनकी तरफ ध्यान आकर्षित करने का जो कार्य सैकडों व्याख्यान नहीं कर पाएंगे। वही कार्य इस अकेले ग्रंथ ने किया है। इसमें संदेह नहीं की नवकार्य के लिए आधारभूत ऐसा यह प्रमान ग्रंथ है।

संत तुकडोजी महाराज कृत 'ग्रामगिता' जैसे सुलभ, सुबोध एव सर्वस्पर्षी ग्रंथ के लिए प्रस्तावना की आवश्यकता नहीं है । अपने देश के सोए हुए देहात जगज , अज्ञान, लोकभ्रम और सामाजिक जडत्व के कारण गाँव के जीवन को प्राप्त दुर्दशा समाप्त हो जाए, उनके निरूत्साही जीवन में चैतन्य निर्माण हो, सांस्कृतिक विरासत की दृष्टि से भाग्यषाली ऐसा यह देश शिक्षा, स्वास्थ, अनाज आदि में उतना ही वैभवषाली हो। यह महाराज की सदैव आंतरिक इच्छा रही है। उसके लिए वे आठों प्रहर कार्य करते आए हैं।भारत का बहुजन समाज अब अपना जीवन अंतर्बाह्य बदले इस एकमात्र विचार के उनका

लिख-पढ सकनेवाले लोगों की संख्या अब भी कम है । उनकी समझ में आए ऐसी भाषा में और स्वीकार्य ऐसे ढंग से जो लिखा जाता है, वही उन तक पहूँच सकता है। 'ग्रामगीता' में यह गुन काफी मात्रा में है । कुछ ओवियाँ तो ऐसी हैं की मंत्री से लेकर महंत तक सुपाठ्य अक्षरो में लिखकर सामने तख्ती पर लटकाकर रखे। इतनी अर्थपूर्ण हैं ।

यही इसका विशेष है। गीता के पन्ने सहज ही पलटनेवाले के ध्यान में आएगा की महाराज ने अपने गाँव बारीकी से देखे है, वहां के नए-पुराने रोगों का अवलोकन कितना सुक्ष्म किया है, सहानुभूतिपूर्वक उन रोगों पर सौम्य, सीधे परंतु प्रभावी उपचार सुझाए हैं, बड़ी कुशलता से सुखी और सत्पवृत्त ग्रामजीवन का चित्र अंकीत किया है।

राष्ट्ररसंत ने देहाती के जीवन की आत्मा ही आत्मसात की है। महाराज की वाणी जितनी वात्सलपूर्ण है, उतनी ही कठोर है। संगठन चातुर्य महाराज के लेखन और जीवन में भी दिखाई देता है। उनकी आंतरिक आकांक्षा ग्रन्थ गठन के पूर्व की प्रार्थना में भी दिख पड़ती है। 'ग्रामगीता' में व्यक्त विचार व्यवस्थित एवं सुसंगत हैं। इसीलिए उनकी अभिव्यक्तिस्पष्टतथा सरस है। कई ओवियाँ सुभाशित जैसी सहज स्मरणीय हैं। बीच-बीच में व्यंग्य-विनोद भी है। महिलोन्नति और वैवाहिक जीवन जैसे पुरोगामी एवं प्रागतिक अध्याय है, जिनसेआश्चर्यही होता है। वैवाहिक जीवन संबंधी विचार भी ऐसे ही उच्च एवं प्रगत लक्ष्य से उत्स्फूर्त है। 'ग्रामगीता' के पारायन और पठन सिर्फ देहात ही नहीं, बल्कि नगरवासी जनता को भी सन्मार्ग पर ले जाए, यही प्रार्थना।

आधुनिक कालखंड में संतश्रेष्ठ उपाधि के योग्य ऐसी महान् विभूतियाँ महाराष्ट्र अथवा भारत में ही नहीं, बल्कि संपूर्ण दुनिया में ऊंगलियों पर गिनी जा सके इतनी होंगी या नहीं भी होंगी। ऐसे महान् संतो में से एक है, तुकडोजी महाराज। संत तुकडोजी महाराज चैतन्य की प्रतिमूर्ति, भक्ति के साक्षात् सागर और मानवता के प्रत्यक्ष अवतार ही थे। अत्यंत ओजस्वी और संपूर्ण मानवतावादी विचारों के

प्रचंड स्थंडिल थे, राष्ट्ररसंत। उनकी वह उज्ज्वल सीख भारतीयों के हृदय षीलालेख की तरह अंकीत है।

राष्ट्ररसंत तुकडोजी महाराज ने सभी आसानी से समझ सके ऐसी भाषा में सत्य, पावित्र्य, ईमानदारी और सेवा का संदेश घर-घर में पहूँचाया। उज्ज्वल भविष्य निर्माण हेतु जनता का मनोबल बढ़ाने में उनका महनीय योगदान रहा है।

भारत के पूर्व वित्त मंत्री श्री. सी. ड़ी. देशमुख जी ने संसद (लोकसभा) में कहा था की, 'वर्तमान समय में ग्रामसुधार की दृष्टि से सरकार अनेक प्रयास कर रही है। उसके लिए काफी रूपया-पैसा खर्च किया जा रहा है। यही कार्य गैर सरकारी ढंग से श्रीमंत तुकडोजी महाराज मध्य प्रदेश और हैदराबाद राज्य में कर रहे हैं, जो प्रशसनीय है। लोगों के दिल में आत्मोद्धार की प्रेरणा निर्माण करके, उनसे संगठित रूप में ग्रामसुधार का कार्य करा लेना, यह कार्य निश्चय ही राष्ट्ररोन्नति की दृष्टि से अत्यंत लाभदायी और महत्त्वपूर्ण है। गाँव-गाँव इसके पठन होना जाना जरूरी है। अतः वह विविध प्रांतिय भाषाओं में अनूदित होकर जनता के लिए तत्काल उपलब्ध होना जरूरी है।

नागपुर विश्वविद्यालय ने प्रस्तावना में लिखा की राष्ट्ररसंत की 'ग्रामगीता' सामान्य जनता के लिए 'भगवद्गीता' से कम नहीं है। महाराज का प्राचीन संस्कृति पर गर्व था। बावजूद इसके उनका दृष्टिकोण अद्यतन षास्त्रीय था। उनकी वाणी ने केवल विदर्भ में ही नही, अपितु भारत में सुदूर सामाजिक एवं राष्ट्ररीय जागृति का अद्भूत कार्य किया है। ऐसे राष्ट्ररसंत की 'ग्रामगीता' के पाँच अध्याय नागपुर विश्वविद्यालय ने अपने पाठ्यक्रम में समाविष्ट कर लिए, यह अभिनंदनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

(1) विश्व बालकृष्ण पर्वत, (2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य.

(2) बाबुलकर, अशोक, (2015), गुरुकुंज, श्री.गुरूदेव प्रकाशन, मोजरी

(3) नोरा, पुनसे (2001), भारत साधू समाज, श्री.गुरूदेव प्रकाशन,

गुरूकुंज, मोजरी

(4) कडवे, अमोल, (2000), राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज की

व्याख्यान, श्री.अमोल प्रकाशन, नागपूर .

(5) सुधा, (2000), श्री. सिंधु के लहरे(पुर्वाध),

हरीभाऊ विरूलकर,गुरूदेव सेवाश्रम, नांदुरा रेल्वे.

(6) बाचुलकर, अशोक, (2014),ग्रामगिता, गुरूकुंज आश्रम, मोजरी.

(7) वाघ, रूपराव, (1999), राष्ट्रसंत साहित्य प्रकाश, नागपूर

(8) वेलुरकर, हरीभाऊ, (2014),साधु सिंध की लहरे, श्री गुरूदेव सेवा,

आश्रम बुलढ़ाना .

(9) ग्रामजागृती भजनावली, श्री गुरूदेव प्रकाशन मंडळ, चंदपूर

(10) कडवे, अमोल,(2002),राष्ट्रसंताची जपान मधिल भाशने ,श्री.गुरूदेव

प्रकाशन, महाल नागपूर

(11) वाघ ,रूपराव , (2007), ईश्वर प्राप्ती का रहस्य, राष्ट्रीय साहित्य प्रकाशन,

नागपूर

12) सुदाम सावरकर, जीवनयोगी-खंड-5.

13) सुदाम सावरकर, संक्षिप्त जीवनदर्शन(ग्रामगीता).

14) गुरूकुंज आश्रम, श्रीगुरूदेव 'मासिक', श्रीगुरूदेव प्रकाशन विभाग.

15) राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज, मराठी/हिंदी भजनावली.

16) प्रा. रघुनाथ कडवे, 1942 चा चिमुर क्रांतिसंग्राम.

17) प्रा. रघुनाथ कडवे, 1942 चा आष्टी स्वातंत्र्य संग्राम.

18) रमेंश गुप्ता (आष्टीचा स्वातंत्र्य संग्राम 1942) बंडखोर खेडयांची गोश्ट.

19) प्रा. रघुनाथ कडवे, राष्ट्रसंतांची जन्मभुमी-यावली (शहीद).

20) डॉ. भाऊ मांडवकर, राष्ट्रसंत आणि स्वातंत्र्याची चळवळ.

---

i